सस्ती विविध पुस्तकमाला

वर्ष १] सस्ती-साहित्य-माला [पुस्तक ५

व्यावहारिक सभ्यता

लेखक—

गणेशदत्त शर्मा गौड़ "इन्द्र"

आगर (मालवा) निवासी

प्रकाशक—

सस्ता-साहित्य-प्रकाशक मंडल

अजमेर

दूसरी बार २००० } अगस्त १९२६ ई० { मूल्य)॥

कुल संख्या ५०००

मुख-बन्ध

ऋग्वेद में लिखा है कि—

"इळा सरस्वती मही तिस्रो देवीर्मयो-भुवः । वर्हिः सीदंत्व स्त्रिधः ॥"

अर्थात्—(इळा) मातृभाषा (सरस्वती) मातृसभ्यता और (मही) मातृभूमि (तिस्रः देवीः) ये तीनों देवियाँ (मयोभुवः) कल्याण करने वाली हैं। इसलिये तीनों देवियाँ (वर्हिः) अन्तःकरण में (अ-स्त्रिधः) बिना भूले हुए (सीदन्तु) स्थित हों।

तात्पर्य्य यह कि मातृभाषा, मातृसभ्यता और मातृभूमि से प्रत्येक मनुष्य का अगाध प्रेम होना चाहिये। यह वेद-वचन हमें मातृ-सभ्यता को सदा ध्यान में रखते हुए कार्य्य करने की आज्ञा देता है; यह "मातृ-सभ्यता" शब्द यहाँ बहुत विचार करने योग्य है। क्योंकि वेद का उपदेश किसी देशविशेष के लिये नहीं है बल्कि सारे संसार के लिये है। इसी लिये वेद ने सभ्यता के साथ मातृ-शब्द लगा कर उसे सीमाबद्ध कर दिया है। इसे हम चाहें तो "देशी-सभ्यता" कह सकते हैं। इससे स्पष्ट है कि प्रत्येक देश की सभ्यता अलग अलग है और जो जिस देश का रहनेवाला है उसे अपने देश की सभ्यतानुसार अपना जीवन व्यतीत करना चाहिये। यह वेद के उक्त उपदेश का अर्थ है। महात्मा गान्धी ने भी इस वेद वाक्य के अनुसार ही अपने इन्दौर नगर में दिये हुए चैत्र कृष्ण ३ सं० १९७४ वै० के व्याख्यान में कहा था:—

"मैं आप लोगों को यह कहने आया हूँ कि आप अपनी सभ्यता पर विश्वास करें और उस पर दृढ़ रहें; ऐसा करने से हिन्दुस्थान सारे संसार

पर साम्राज्य कर लेगा ।......हम ऐसे देश के रहनेवाले हैं जो अभी तक उसी की सभ्यता पर निर्भर रह सका है ।......यूरोप की सभ्यता आसुरी है ।.....अगर हम यूरोप की सभ्यता का अनुकरण करेंगे तो हमारा नाश हो जायगा । मैं इन सूर्यनारायण से (जो उदय हो रहे हैं) प्रार्थना करता हूँ कि भारत अपनी सभ्यता न छोड़े ।......कृपा कर प्राचीन सभ्यता को मत भूल जाइये ।" इ०

हमारा राष्ट्र-सूत्रधार महात्मा गांधी हमें उक्त वचनों द्वारा अपनी प्राचीन सभ्यता पर अटल रहने की आज्ञा देता है । सृष्टि के आरम्भ में उत्पन्न वेद जो कह रहा है उसे ही वर्त्तमान काल में महात्मा गांधी भी कह रहा है । अर्थात् अत्यन्त प्राचीन और अत्यन्त नवीन दोनों बातें एक सी ही हैं ।

कई लोगों का अन्दाज़ है कि जिस प्रकार विदेशों में परिवर्तन होगा उसी प्रकार चलने से हमारा कल्याण होगा, किन्तु यह भ्रम है । भारतेतर देश इन दिनों अपने उन्नति के पथ पर अग्रसर हुए हैं, अतएव वहाँ जितने परिवर्त्तन न हों, वे ही थोड़े हैं; किन्तु हमारा भारत आज से हजारों वर्ष पूर्व अपने देश की जलवायु के अनुसार उन्नति की पराकाष्ठा कर चुका है । यह काल तो हमारे पतन का है । इसलिये हमें अपनी प्राचीन सभ्यता को ढूँढ कर तदनुसार आचरण करना चाहिये । हम लोग विदेशीय सत्ता में वर्षों से हैं, इसलिये हमने अपनी सभ्यता को भुला कर उन्हीं की सभ्यता को अपना लिया है, यह ठीक नहीं है ।

हमारा देश एक ऐसा देश है जो अपनी सभ्यता द्वारा ही उन्नति कर सकेगा । अन्य देशों के अनुकरण से हम सभ्य बनने के बजाय असभ्य हो जावेंगे । यूरोप की कई सभ्यताएँ नष्ट हो गई और हो जावेंगी किन्तु हमारे देश की सभ्यता ज्यों की त्यों इस पतन के समय में भी जीवित है । सब विद्वान् एक स्वर से इस बात को स्वीकार करते हैं कि "भारत-वर्ष की जो सभ्यता आज से हजारों वर्ष पहले थी, वही आज भी है ।"

किन्तु अब हमें सन्देह होने लगा है और हमारा विश्वास हमारी सभ्यता पर से उठता जाता है।

हमारी सभ्यता हमारे ऋषि, मुनियों की घोर तपश्चर्या का सार है। फिर भला वह कैसे नष्ट हो सकती है—और किस प्रकार अनुपयोगी साबित की जा सकती है ? सब लोग इस बात को जानते हैं कि जैसी तपश्चर्या भारत में हुई थी वैसी संसार में कहीं नहीं हुई। यदि हम हिन्दुस्थान को सभ्य बनाना चाहते हैं तो हमें भी तप के एक अंग "संयम" को लेना पड़ेगा, और निश्चय समझ लीजिये कि यदि हमारा जीवन संयममय हो जावेगा तो हम संसार में अत्यन्त सभ्य हो जावेंगे।

यजुर्वेद कहता है कि—

"भद्रंकर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा ँ्सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः।" य० अ० २५ मं० २१

अर्थात् कानों से अच्छी बातें सुनें, आँखों से सदा शुभ पदार्थों को ही देखें और अङ्ग उपाङ्गों द्वारा सदा शुभ कार्यों को करते रहें। सारांश यह कि हमारे शरीर का रोम रोम सदा कल्याण पथ का अनुगामी हो। यह हमारी प्राचीन सभ्यता की पराकाष्ठा है।

यह सब कुछ है, किन्तु अभी तक इस विषय पर, मेरे विचार से संस्कृत भाषा को छोड़ कर किसी अन्य देशी भाषा में एक भी पुस्तक नहीं है। कई वर्षों से मैं एक इस विषय की पुस्तक राष्ट्रभाषा हिन्दी में लिखने के लिये तय्यारियाँ कर रहा था। उसी अपनी वर्षों की तय्यारी को आज आपकी सेवा में ला रखने का यह साहस किया है। इस पुस्तक में जो कुछ छोटे मोटे नियम लिखे हैं सभ्यता के उतने ही नियम हैं अब और नहीं रहे, यह सोच लेना अनुचित है। आज तक मैं अपनी विचार-दृष्टि से इतना ही देख सका हूँ, इससे अधिक विचार के लिये अधिक दिनों की जरूरत थी, अतएव अभी इतने नियमों को ही पाठकों की सेवा में उपस्थित कर देना उचित समझा गया।

मैंने इस पुस्तक में मोटे मोटे नियमों को ही लिखा है, किन्तु इनके अन्तर्गत अनेकों हैं, जिन्हें पाठक स्वयम् विचार सकते हैं। इनसे मिलते जुलते बहुत से नियमों को इस पुस्तक में लिख कर व्यर्थ ही पुस्तक के आकार को बढ़ाना मैंने ठीक नहीं समझा। साथ ही यह भी ध्यान था कि पुस्तक का आकार बड़ा होने से मूल्य भी अधिक हो जावेगा और सर्वसाधारण के हाथों तक इसका पहुँचना कठिन हो जावेगा। ऐसे कई कारणों से इसे इतनी बड़ी ही रखना पड़ा। यदि प्रेमी पाठकों ने इसे पसन्द किया तो इसका द्वितीय संस्करण शीघ्र ही परिवर्द्धित रूप में निकाला जावेगा।

एक बात यहाँ और कह देना उचित है—लोगों का प्रायः यह खयाल है कि "जो आदत या स्वभाव पड़ गया उसका छूटना असंभव है इत्यादि।" यह विचार गलत है। असंभव नहीं है, कष्ट-साध्य अवश्य है। इसलिये ज़रा बिचार के साथ काम किया जावे तो सैकड़ों बुरीं आदतें छूट जावेंगी। एक दो बार की असफलता से निराश नहीं हो जाना चाहिये। बल्कि इस समय इस वाक्य को याद रखिये कि—

"योजनानां सहस्रंतु शनैः गच्छेत् पिपीलिका"।

अर्थात्—अत्यंत छोटा जीव चींटी निरन्तर चलते रहने पर ही हजारों कोस चली जाती है। फिर भला हम तो मनुष्य हैं, हम क्या नहीं कर सकते? इस मंत्र का अर्थ सहित जाप करते ही आप के शरीर में स्फूर्त्ति आ जावेगी और एक न एक दिन बड़े भारी काम को भी कर डालने का आपमें महान् पुरुषार्थ आ जावेगा। इसलिये हिम्मत न हारिये और वर्षों के दोषों को पुरुषार्थ द्वारा नष्ट कर दीजिये। यह तो है ही नहीं कि आप में असंख्य असभ्यताएँ भरी हुई हैं या आप असभ्यता के भंडार हैं! यदि कुछ दोष भी हों तो उन्हें हटा देना एक पुरुषार्थी मनुष्य के लिये कोई बड़ी बात नहीं है।

इस पुस्तक में मैंने जहाँ तहाँ धार्मिक ग्रंथों के वचन भी उद्धृत किये हैं जो पाठकों को अरुचिकर न होंगे, ऐसी आशा है । मेरा ऐसा करने का एक मात्र कारण भारत की प्राचीन सभ्यता का दिग्दर्शन कराना है ।

हिन्दी-भाषा में यह पुस्तक इस विषय पर मेरे विचार से पहिली ही है, अतएव हिन्दी भाषा के अनुभवी विद्वानों को इस विषय पर पुस्तकें लिखने के लिये कलमें उठा लेनी चाहियें । क्योंकि इस समय देश को सभ्य बनाने की बड़ी भारी आवश्यकता है । हमारा देश सभ्यता को खो कर विदेशियों की दृष्टि में तुच्छ हो गया है, अतएव पुनः पूर्ववत् पद प्राप्त करने के लिये देश को "सभ्यता" की बड़ी भारी आवश्यकता है, इसलिये देश को उन्नत करने के लिये लेखकों को इस विषय पर अच्छी अच्छी पुस्तकें लिखनी चाहियें ।

अन्त में मैं अपने पाठकों से इस पुस्तक की भूल-चूकों के लिये क्षमा माँगता हुआ, त्रुटियों की सूचना मुझे देने की प्रार्थना करते हुए, अपनी कलम को रोकता हूँ । शम् ।

आगर (मालवा)
वर्ष का प्रथम दिन
सं० १९७९ वि०

विनीत—
गणेशदत्त शर्मा गौड़
('इन्द्र')

—:०*०:—

लागत का ब्योरा—

कागज़	११०)	रुपया
छपाई	११६)	,,
बाइंडिंग	१७॥)	,,
लिखाई व्यवस्था, विज्ञापन आदि खर्च	१२६॥)	,,
	३७०)	रुपया

कुल प्रतियाँ २०००

लागत मूल्य प्रति कापी ≡)

व्यावहारिक सभ्यता

(१)

परमात्मा के स्मरण से मन पवित्र होता है। जहाँ मन की पवित्रता होती है, वहाँ ज्ञान का प्रकाश होता है। जहाँ ज्ञान का प्रकाश है वहाँ अज्ञानान्धकार नहीं रह सकता। अतएव अज्ञान रूपी अन्धकार (असभ्यता) को हटाने के लिये उस परम पिता परमात्मा का रात दिन स्मरण करो। जिसके पवित्र मन में वह देवाधिदेव निवास करेगा, वहाँ असभ्यता का रहना कठिन है।

(२)

ईश्वर-चिन्तन ऐसी जगह बैठकर करना चाहिये, जहाँ कोई आता जाता न हो, अर्थात् बिलकुल एकान्त हो। बहुत से लोग नदी, तालाब और कुएँ के घाट पर सन्ध्योपासनादि करने लगते हैं। बहुत से ऐसे मन्दिरों में जहाँ लोग प्रायः आते जाते रहते हैं; बकध्यान लगाये बैठे रहते हैं—यह ठीक नहीं। ऐसे लोग यदि सच्चे मन से ईश्वरोपासना करें तो भी लोग उन्हें ढोंगी कहने लगते हैं।

(३)

जब कोई बाहर के आदमी अपने पास बैठे हों तो हाथ पैर

फैलाकर या उनकी तरफ पैर करके ऐसे बेढंगे ढंग से नहीं बैठना चाहिये जिससे दूसरे लोगों को बुरा मालूम हो या कष्ट हो।

(४)

जँभाई लेते समय हाथ अथवा रूमाल की आड़ अपने मुख के आगे कर लेना चाहिये।

(५)

छींकते समय भी नाक और मुख के आगे अपना हाथ या रूमाल कर लेना चाहिये।

(६)

छींक के बाद इस बात का सदा ध्यान रखना चाहिये कि मूछों पर या छाती पर नाक का मैल या मुख का थूँक तो छींक के वेग से नहीं गिर गया है! यदि गिरा हो तो तत्काल उसे साफ कर डालना चाहिये।

(७)

लोगों की तरफ मुख करके छींकना या जँभाई लेना अनुचित है।

(८)

नाक साफ करते समय इस बात का ध्यान रखो कि अत्यन्त ज़ोर की आवाज न हो। रूमाल से नाक साफ करके जेब में रख लेना भी ठीक नहीं है।

(९)

नाक का मल, कफ और थूक वगैरह घृणा उत्पन्न करनेवाली चीजें ऐसी जगह डालनी चाहियें जहाँ लोगों की नज़र न पड़े।

(१०)

पान का पीक, या जरदे का पीक, दीवारों पर, व कोने में

किवाड़ों के पीछे या मन चाहे जहाँ नहीं थूँक देना चाहिये। खास करके दूसरे के घर में इस बात का बहुत ही ध्यान रखना चाहिये।

(११)

लिखने के बाद अक्षरों को सुखाने के लिये स्याहीचट (ब्लाटिंग पेपर) की जगह अपने कपड़े की अस्तीन या कपड़े का अन्य भाग लगाकर नहीं सुखाना चाहिये।

(१२)

किसी की गुप्त बात को जो आपको नहीं सुनाना चाहता हो सुनने के लिये व्यग्रता नहीं दिखानी चाहिये और न उसे सुनने का प्रयत्न ही करना चाहिये।

(१३)

जँभाई छींक या डकार के बाद, जो शब्द उनके कारण होता है उससे अधिक शब्द अपने मुख से नहीं करना चाहिये।

(१४)

लिखते हुए व्यक्ति की बिना आज्ञा प्राप्त किये, उसका लिखा हुआ पढ़ने की कोशिश हरगिज़ नहीं करनी चाहिये।

(१५)

यदि कोई लिख पढ़ रहा हो तो उसके पीछे सिर पर खड़े रहना या पढ़ना उचित नहीं है।

(१६)

पानी खड़े खड़े नहीं पीना चाहिये और पीते समय "उचक उचक" की आवाज कण्ठ से नहीं होने देना चाहिये। बिना आवाज के भी पानी सुगमतापूर्वक पिया जा सकता है।

(१७)

अपने से बड़े तथा मान्य पुरुषों के साथ, शान्ति, नम्रता और अत्यन्त बुद्धिमानी से बात-चीत करनी चाहिये। ऐसा न हो कि आप उनकी नज़र में उद्दण्ड, मूर्ख अथवा घमण्डी ठहरें।

(१८)

दिल्लगी और मज़ाक का सम्बन्ध समवयस्क व्यक्ति से ही ठीक मालूम देता है। पूज्यों और वयोवृद्धों से हँसी मज़ाक करना अनधिकार चेष्टा है।

(१९)

दिल्लगी मज़ाक में गन्दे और फोश शब्दों को समवयस्क मनुष्यों के साथ भी नहीं प्रयोग करना चाहिये।

(२०)

मज़ाक का विषय हमेशा गहरा, आलंकारिक और सभ्यता-पूर्वक ऐसा हो जो साधारण समझ के लोगों की समझ में ही न आ सके।

(२१)

नशा नहीं करना चाहिये क्योंकि इसके सेवन-करनेवाले की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। वेद कहता है:—

"वितेमदं मदावति शरमिव पातयामसि।
प्रत्वा चरुमिव येषन्तं वचसास्थापयामसि॥" (अथर्व)

अर्थात् नशा कभी न करना चाहिये। यदि कुसंगति में फँस कर नशा कर भी लिया हो तो बेहोशी आने के पहिले ही अपने घर में जाकर सो जाओ। सबसे उत्तम तो यही बात है कि नशे को अपना जानी दुश्मन समझो और बचते रहो।

(२२)

भोजन कर चुकने के बाद, हाथ वगैरः इस प्रकार न धोओ कि भोजन के पात्र के बाहर छींटे उड़ें। और धो चुकने के बाद हाथ भी मत फटकारो।

(२३)

भोजन करते समय खूब मुख फाड़ फाड़ कर मुँह चलाना ठीक नहीं है। और न मुँह चलते समय ओठों और जबान का "चपल चपल" शब्द ही होने दो।

(२४)

किसी वस्तु को खाते समय उतना ग्रास लो जितना कि मुँह में समा सके। बड़ा ग्रास लेकर फिर दांतों से काट लेना और शेष भाग का दूसरा ग्रास करके खाना अनुचित है।

(२५)

खाद्य पदार्थ के बहुत ही बड़े बड़े या बिलकुल छोटे छोटे ग्रास नहीं करना चाहिये।

(२६)

दाहिने हाथ से ही भोजन करना चाहिये, बाँये हाथ से कदापि नहीं खाना चाहिये। धर्मशास्त्रों में भी लिखा है कि—

"स्वाध्याये भोजने चैव दक्षिणं पाणिमुद्धरेत्।"

(२७)

भोजन करते समय व्यर्थ ही इधर उधर की गप्पें मारना या अधिक बोलना ठीक नहीं है। बिलकुल चुप होकर भी बैठ जाना और आवश्यकता आ पड़ने पर भी न बोलना अनुचित है।

(२८)

भोजन करते वक्त पतले या चिकने पदार्थ में हाथ लतपत नहीं करना चाहिये। अँगुलियों को चाटकर साफ कर देना चाहिये।

(२९)

खाते समय या खाने के बाद, मूछें, होठ और दाढ़ी खाद्य वस्तु से लिपटी न हो इस बात का अच्छी तरह ध्यान रखो।

(३०)

भोजन के पदार्थ को इस ढंग से धीरे धीरे और अच्छी तरह उठाओ कि उसका जरासा भाग भी कपड़ों पर या शरीर पर गिरने न पावे। खास करके पतले पदार्थों को खाते समय विशेष ध्यान रखो।

(३१)

भोजन करते समय, अच्छी बैठक हो, चित्त शान्त हो और मन प्रसन्न हो।

(३२)

प्रेम द्वारा दिये गये किसी के भोजन को बुरा मत कहो। यदि वह उस पदार्थ की त्रुटि पूछने की बार बार इच्छा प्रकट करे तो ऐसे शब्दों में कहो जो उसे कड़वे न मालूम हों।

(३३)

भोजन यदि दो चार या इससे अधिक मनुष्यों के साथ बैठ कर कर रहे हो तो इस बात का ध्यान रखो कि उनसे बहुत पूर्व या बहुत देर बाद खाना बन्द न हो।

(३४)

भोजन करनेवालों की पंक्ति में से यदि कार्यवशात् उठना

अत्यावश्यक हो तो पास के जीमते हुए महाशयों से आज्ञा लेकर उठना चाहिये।

(३५)

भोजन करते समय अपनी दृष्टि चंचल न रखकर अपने पात्र में रखे हुए खाने के पदार्थों पर ही होनी चाहिये।

(३६)

खाद्य पदार्थ के रहने पर यदि और खाने की इच्छा हो तो "लाओ लाओ" का हल्ला नहीं मचाना चाहिये। वरन् विनम्र और धीमे स्वर से मँगा लेना चाहिए।

(३७)

यदि आप किसी एक खाद्य पदार्थ की इच्छा प्रकट कर रहे हों, और वह उसे सुन कर दूसरा पदार्थ आपके सामने लाकर रखता हो तो उसे ही स्वीकार कर लो। और समझ लो कि जिस वस्तु की आप इच्छा करते थे वह भंडार में नहीं रही।

(३८)

भोजन के समय रंज पैदा करनेवाले और घृणा दिलाने वाले वाक्यों का प्रयोग भूल कर भी मत करो।

(३९)

पंक्ति में भोजन करते समय ऐसे भद्दे शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिये जिनसे कि दूसरे लोग खाने में संकोच करने लगें। जैसे—"क्या मैं राक्षस हूँ जो इतना खा जाऊँगा !"

(४०)

यदि किसी वस्तु को एक आदमी बाँट रहा हो तो उससे

माँगना नहीं चाहिये । और न उस वस्तु को तरफ घूर घूर कर ही देखना चाहिये ।

(४१)

भोजन-पंक्ति में अन्य महाशयों से अधिक कोई चीज घर से लाकर या बाजार से मँगाकर बिना किसी जरूरी कारण के या पंक्ति में बैठे महाशयों की अनुमति के नहीं खाना चाहिये ।

(४२)

किसी के यहाँ भोजनार्थ—निमंत्रण में जाने पर, वहाँ अपने घर से कोई चीज लेजाकर खाना उसका अपमान करना है, जिसके यहाँ आप भोजनार्थ गये हैं ।

(४३)

भोजन के निमंत्रण में अन्य महाशयों के घर अपने छोटे छोटे बच्चों को लेजाना उचित नहीं होता । हाँ, स्त्रियाँ ले जावें तो कोई हानि नहीं ।

(४४)

यदि स्त्रियाँ आस पास हों और आपके कंठ में उस समय कफ या खाँसी आगई हो तो जैसे तैसे रोको । दूर चले जाना या आड़ में जाकर खाँसना ठीक है । अथवा इस ढंग से उस खाँसी या कफ को शमन करो कि उन स्त्रियों का ध्यान आपकी तरफ आकर्षित न हो ।

(४५)

यदि कही स्त्रियाँ बैठी हों तो वहाँ चुपचाप चला जाना ठीक नहीं है । ऐसा कोई शब्द करके आगे बढ़ो कि उन्हें तुम्हारा आना पहले से ही मालूम हो जावे ।

(४६)

स्त्रियों को देखकर अपनी दृष्टि किसी दूसरी तरफ़ कर लेना चाहिये ।

(४७)

स्त्रियों के साथ बातचीत करते समय अपनी दृष्टि नीची रखना चाहिये। यदि आवश्यकता हो तो उनकी ओर देख कर फिर नीची निगाह कर लो ।

(४८)

कन्याओं को बहिन या बेटी, युवतियों को बाई या बहिन तथा वृद्धा स्त्रियों को माजी या माता कहकर सम्बोधन करो।

(४९)

जहाँ पर लोग घूमते फिरते हों वहाँ मल, मूत्र, थूंक, नाक का मल और कफ वगैरः डालना ठीक नहीं है।

(५०)

छींक, जँभाई, और डकार के अन्त में "ओ३म्" शब्द का उच्चारण करना चाहिये।

(५१)

जो स्त्री आपको देखकर लज्जा करे, उसके सामने ज्यादा फिरना, बिना कारण बातचीत करना या उसकी तरफ़ देखना उचित नहीं है।

(५२)

जहाँ औरतें हों वहाँ गाना बजाना, ताली पीटना, चुटकियाँ बजाना और सीटी देना असभ्यता है।

(५३)

जहाँ प्राय: औरतें रहती हों उस जगह ठहरना, घूमना या बार बार जाना ठीक नहीं है।

(५४)

साधारण दशा में किसी आदमी को सीटी बजाकर बुलाना ठीक नहीं है। ऐसे मनुष्यों को लोग बदमाश और गुण्डा कहते हैं।

(५५)

अपने गाँव के बाजार में चलते समय गलियों में देखना और ऊपर की ओर छज्जें तथा अट्टालिकाओं को देखना उचित नहीं है।

(५६)

तम्बाकू पीनेवाले मनुष्यों को, नहीं पीनेवाले तथा अपने पूज्य पुरुषों का ध्यान रखना चाहिये। ऐसे लोगों को ओर धुआँ भी नहीं जाने देना चाहिये।

(५७)

अपने मान्य एवम् वयोवृद्ध पुरुषों को दिखाकर किसी प्रकार का मादक द्रव्य सेवन मत करो।

(५८)

ओहदे में बड़े, उम्र में बड़े, मान में बड़े, विद्या में बड़े, और वर्ण में बड़े मनुष्यों को सदा पूज्य और अपना मान्य समझो।

(५९)

अपने पूज्य और गुरुजनों को, जब कभी वे मिलें, प्रणाम अवश्य करो।

(६०)

प्रणाम करने का ढंग लापरवाही लिये नहीं होना चाहिये।

कम से कम प्रणाम करते समय श्रद्धा, भक्ति, और प्रेम उनके साथ अवश्य ही दिखाना चाहिये। महर्षि मनु कहते हैं—

"अभिवादन शीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारोतस्य वर्द्धन्ते आयुः कीर्तिर्यशोबलम्॥"

(६१)

किसी के साथ बातचीत करते समय, हाँ या ना के स्थान पर "जी हाँ" "जी नहीं" अथवा अन्य किसी प्रकार के ऐसे ही शिष्ट वाक्यों का प्रयोग करो।

(६२)

महाशय, जनाब, श्रीमान्, मित्र, मेहरबान, साहिब, बाबू, भाई आदि शिष्टाचार-सूचक शब्दों का लोगों के साथ बातचीत के समय यथायोग्य व्यवहार करो।

(६३)

यदि आपको कोई प्रणाम करता है, और यदि उससे आपका मनोमालिन्य भी है तो भी उसका यथोचित उत्तर बड़े ही प्रेम के साथ देना आपका कर्त्तव्य है।

(६४)

अपने पूज्य पुरुषों के सामने पैर पर पैर रखकर मत बैठो, और न उनसे उच्च आसन पर ही बैठो।

(६५)

जब कोई पूज्य पुरुष अपने यहाँ आवे तो उसे उठकर मान दो और यदि आप स्वयम् किसी उच्च आसन पर बैठे हो तो उसे उस-पर बिठाकर खुद किसी नीचे दर्जे के आसन पर बैठो। धर्म-शास्त्र भी कहता है—

"अभिवादयेे वृद्धांश्च दद्याच्चैवासनं स्वकम्।
कृताञ्जलि रुपासीत गच्छतः पृष्ठतोऽन्वियात्॥"

(६६)

किसी मनुष्य के अपने घर आने पर, "आइये पधारिये, शोभा बढ़ाइये, गृह पवित्र कीजिये, विराजिये" आदि प्रेम-भरे शब्दों से नम्रता दिखाते हुए, उसका हर्षपूर्वक स्वागत करना चाहिये।

(६७)

अपने घर पर आये हुए मनुष्य की इच्छा देखकर, "कैसे कृपा की? कैसे कष्ट किया? किधर रास्ता भूल गये? क्या आज्ञा है?" इत्यादि प्रेम-पूर्ण शिष्ट वाक्यों को बोलकर उसके आने का कारण पूछो। बाद में नम्रतापूर्वक उससे बातचीत करो।

(६८)

यदि किसी का अपने ऊपर थोड़ा सा भी अहसान हो तो "मैं आपका आभारी हूँ, बड़ी कृपा की, मैं आपको धन्यवाद देता हूँ, साधुवाद" आदि शब्दों द्वारा कृतज्ञता प्रकट करो।

(६९)

अपने घर पर आये हुए का, यदि वह आपका शत्रु भी है तो भी, अनादर मत करो। शत्रु का प्रेम-पूर्वक आदर ही आपके विशाल हृदय का द्योतक होगा।

(७०)

अपने पूज्य जनों का स्वागत करने के लिये कुछ आगे बढ़ो।

(७१)

मान्य पुरुषों के बराबर चलने या बैठने का विचार मन में मत लाओ। हाँ, ऐसे काम करो जिससे लोग स्वयम् आपका

सम्मान करें। कई लोग न कुछ होते हुए भी अपने से मान्य पुरुषों के बराबर बैठने या चलने में अपना गौरव समझते हैं— यह असभ्यता है।

(७२)

मुसाफिरी में, यान में, वाहन पर, अथवा आपत्काल में उक्त नियम में यदि कुछ शिथिलता आ जावे तो वह क्षम्य होती है।

(७३)

अपने पूज्य अथवा मान्य पुरुष के खड़े हुए बातें करने पर खुद बैठे न रहो।

(७४)

किसी के प्रश्न का उत्तर कठोर वचनों से कदापि न दो। इस लिये नीतिकारों ने कहा है—

"सत्यं ब्रूयात्प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात्सत्यमप्रियम्"

और

"भद्रं भद्रमिति ब्रूयाद्भद्रमित्येव वा वदेत्।"

(७५)

अपने घर पर आये हुए व्यक्ति का, जल, अन्न, पानसुपारी आदि स्वागतोपयोगी द्रव्यों द्वारा स्वागत करो। भारतीय सभ्यता में आतिथ्य का सब से ऊँचा पद है।

(७६)

पैर फटकार कर या पटक कर "धमाधम" शब्द करते हुए चलना ठीक नहीं है।

(७७)

चलते समय अपनी टाँगें फेंककर चलना, टाँगों को इधर उधर घुमाकर रखना, चूतड़, कमर या सिरको हिलाना ठीक नहीं है।

(७८)

चलते समय दोनों हाथों को खूब झुलाना, एक को झुलाना और दूसरे को आकरण ही बन्द रखना तथा हाथों की अँगुली या अँगुलियों को छितरा कर—फैलाकर चलना ठीक नहीं है।

(७९)

चाल ढाल में बनावट का होना ठीक नहीं, उसमें स्वाभाविकता होनी चाहिये। हाँ, यदि कुछ दोष हो तो उसे दूर करने का सदा ख्याल रखो।

(८०)

बाजार में अकारण दौड़कर आना जाना अनुचित है।

(८१)

चलते समय ध्यान रखो कि पैरों से धूल न उड़े। और यदि उड़ती हो तो हवा के रुख को देखकर चलो, जिससे वह उड़कर किसी अन्य महाशय पर न गिरे।

(८२)

दिन छुपते समय और सूर्योदय के समय सोना, खाना पीना और रोना नहीं चाहिये।

(८३)

चलते फिरते कुछ न कुछ खाते रहना ठीक नहीं। खाने की वस्तु को जेब में भरकर खाने की आदत प्रायः बचपन से पड़ जाती है, इसलिये यदि बचपन के समय बालकों की जेबों में खाने की चीज़ माता पिता प्रेम के कारण न भर दिया करें और समझदार बच्चे स्वयम् ऐसी आदत न डालें तो बड़ा ही अच्छा हो।

(८४)

लेटे हुए पड़े पड़े खाना सभ्यता के विरुद्ध है। इसलिये लेट कर नहीं खाना चाहिये।

(८५)

द्वार में बैठकर भोजन नहीं करना चाहिये। प्राचीन पुरुषों ने भी इसे बुरा कहा है।

(८६)

अपने दोनों घुटनों को हाथों से पकड़कर उसमें सिर देकर बैठना मूर्खता की खासी पहिचान है।

(८७)

द्वार में बैठना या चौखट में टाँगे अड़ाकर बैठना अच्छी बात नहीं है।

(८८)

लम्बी टाँगें करके—टाँग पर टाँग रखकर अर्थात् पैरों में आँटी डालकर बैठना ठीक नहीं होता।

(८९)

जब देखो तब मुख में अँगुली डाले रखना या दाँतों से नाखून काटना असभ्यता है। मनु महाराज ने भी कहा है कि:—

"दन्तैर्नोत्पाटयेन्नखान्"

(९०)

व्यर्थ ही हाथ पैरों की अँगुलियों को तथा अङ्ग के अन्यान्य भागों को चटकाना (कटकाना) ठीक नहीं।

(९१)

थूकते समय या कुल्ली करते समय हवा के चलने का रुख देखो; ऐसा न हो कि किसी मनुष्य पर जा गिरे।

(९२)

घर का कचरा कूड़ा, मिठाई आदि खाया हुआ जूठा दोना या काग़ज़, फल की गुठली या छिलका अथवा अन्य किसी प्रकार की खराब वस्तु फेंकते समय इस बात का हमेशा ध्यान रखो कि किसी रास्ते चलते हुए मनुष्य पर न जा गिरे।

(९३)

पानी वग़ैरः डालते समय किसी पर उसके छींटे न जा गिरें, इस बात का हमेशा ख्याल रखो।

(९४)

यदि दृष्टि में किसी प्रकार का दोष नहीं है तो बिलकुल आँखों के पास ले जाकर पढ़ना लिखना ठीक नहीं।

(९५)

गालियाँ बकना बड़ी बुरी बात है। इस बात का ध्यान रखो कि कभी क्रोध में भी अपने मुँह से किसी के लिये गाली न निकले। कई लोगों की एक आदत सी पड़ जाती है कि बातचीत करते समय भी बात बात में गाली बोलते रहते हैं। यह उनकी टेक सी हो जाती। इसलिये इस तकियाक़लाम को छोड़ देने की कोशिश करनी चाहिये।

(९६)

कई लोग अपने मित्रों तथा निकट सम्बन्धियों से, जिनके साथ मज़ाक दिल्लगी का अधिकार होता है, गाली आदि का बड़े ही फ़ख़ और प्रेम के साथ व्यवहार करते हैं, यह बात बिलकुल अनुचित है।

(९७)

जिसके साथ बातचीत अथवा थोड़ा भी व्यवहार करना हो उसका पहिले स्वभाव पहिचान लो। उसके बाद स्वभाव के अनुसार काम करो। किसी अपरिचित व्यक्ति से पहिली भेंट में ही ऐसा व्यवहार न करो जैसा किसी परिचित से करते हो।

(९८)

यदि स्वीकार करने योग्य बात है और उसे आपका मन मान रहा है तो उसे बिना किसी भय के मान लो। व्यर्थ ही जिद्द मत करो।

(९९)

कपड़े हमेशा साफ सुथरे पहिनो। कम कीमत के मोटे भले ही हों, किन्तु साफ हों। बहुमूल्य रेशम या मखमल के फटे और मैले न हों।

(१००)

फटे हुए कपड़ों को सिलाकर पहिनना ठीक है। सिलेहुए पैबन्द लगे कपड़ों को पहिनने में कोई शर्म की बात नहीं है; हाँ, फटे, लटकते हुए और मैले कपड़ों को पहिनना ठीक नहीं है।

(१०१)

जातीय अथवा अपने देश की पोशाकों को छोड़कर, देखा देखी अन्य पोशाकें नहीं पहिननी चाहिये।

(१०२)

फेशन के विरुद्ध कपड़े मत पहिनो। जैसे अँगरखा पर कोट, कोट पर कुरता या कोट पर वास्कट (फितोई)।

(१०३)

हँसते समय, कहकहा मारकर न हँसो। हँसी ऐसी हो जिसकी आवाज़ न हो।

(१०४)

हँसते समय बुरी तरह मुँह फाड़कर या दाँत दिखाकर नहीं हँसना चाहिये। कई लोगों का हँसते समय मुख अच्छा लगने की जगह उलटा बदसूरत मालूम होने लगता है। यह आदत काच में मुंह देखते हुए हँसकर दूर की जा सकती है।

(१०५)

किसी से कोई वस्तु लेकर, मज़ाक़ में भी उसे लौटाते समय फेंकना नहीं चाहिये। इस तरह की बेपरवाही से लोग असभ्य समझे जाते हैं। जिस तरह नम्रता दिखाकर उसे लिया था उसे उसी भावना के साथ लौटाओ। कई लोग पुस्तक को लेकर लौटाते समय फेंक देते हैं, यह ठीक नहीं है; क्योंकि इस तरह पुस्तक फट जाती है—जिल्द टूट जाती है।

(१०६)

किसी चीज़ को फेंककर लौटाना, जिसे लौटाया जाता है उसके अपमान का सूचक है। अतएव भले ही कुछ कष्ट सहना पड़े किन्तु ली हुई वस्तु को सभ्यतापूर्वक लौटाओ। बल्कि दोनों हाथों से दो।

(१०७)

भोजन की वस्तु को फेंककर, भोजन करनेवाले मनुष्य के आगे कभी नहीं डालना चाहिये। कई लोग रोटी, पूरी, लड्डू आदि पदार्थों को फेंककर परोसते हैं, यह अनुचित है।

(१०८)

सवारी में बैठे हुए के लिये, वृद्ध, रोगी, स्त्री, स्नातक, अंधा, लँगड़ा, दूलह, राजा और बोझवाले के लिये रास्ता छोड़ दो। मनुजी ने भी कहा है।

"चक्रिणो दशमीस्थस्य रोगिणो भारिणः स्त्रियाः।
स्नातकस्य च राज्ञश्च पन्था देयो वरस्य च॥"

(१०९)

बाजार और गलियों में चलते हुए गाने न गाओ। यहाँ मेरा मतलब जुलूस अथवा नगर-कीर्तन से नहीं है।

(११०)

कई लोग लिखते समय पेन्सिल की नोक को थूक लगाकर लिखते हैं—ऐसा करने से अक्षर गहिरे काले आते हैं; किन्तु यह आदत ठीक नहीं। साफ्ट (कोमल) पेन्सिल से बिना थूक के ही अच्छा लिखा जा सकता है। इसके अलावा पेन्सिल की दोनों चीपों को जोड़ने में सरेस काम में लाया जाता है जो अपवित्र पदार्थ है।

(१११)

पाठशाला में कई घिनौने बालक अपनी स्लेट (पट्टी) को थूक से साफ करते हैं, यह आदत बहुत ही भद्दी है।

(११२)

दिन में सैकड़ों बार अकारण ही जहाँ तहाँ थूकते मत फिरो। यह बड़ी बुरी आदत है।

(११३)

जो वस्तु जिसे प्राप्त नहीं हो सकती हो, वह वस्तु उसे दिखा दिखाकर अपने काम में लाना असभ्यता है।

(११४)

पराये घर जाकर अपने घर के से काम मत करो बल्कि उस की सुविधाओं का और उसके बनाये हुए नियमों का अच्छी तरह ध्यान रखो ।

(११५)

प्रत्येक मनुष्य के मस्तिष्क में रात-दिन विचारों का ताँता बँधा रहता है किन्तु उसे बड़बड़ाकर होंठ हिलाकर, मुँहकी बनावट तथा हाथों के इशारों द्वारा प्रकट नहीं होने देना चाहिये ।

(११६)

सो कर उठने के बाद बिना मुँह को साफ किये किसी से न मिलो—क्योंकि लार वगैर: के टपकने से, आँख वगैर: के मल से और नाक पर की चिकनाई से बेहूदी सूरत बनी होती है ।

(११७)

दोनों भौहों के बीच में काली रेखा या अन्य किसी दूसरे रङ्ग की रेखा लगाना छिछोरपन का विज्ञापन है ।

(११८)

लिखते समय कलम और हाथ को स्याही से लतपत मत होने दो । बल्कि ऐसी सावधानी से लिखो कि हाथ को जरा भी स्याही का दाग तक लगने न पावे ।

(११९)

दावात में स्याही भरने के लिये कलम को उसमें ज़ोर ज़ोर से मत पटको ।

(१२०)

कलम में स्याही अधिक भर आने पर उसे इधर उधर मत छींटो ।

(१२१)

अपने कपड़ों पर स्याही की एक बूँद भी मत गिरने दो।

(१२२)

बहुत से लोगों की आदत होती है कि कलम को साफ़ करने के लिये अपने सिर के बालों में पोछ लेते हैं, यह ठीक नहीं है।

(१२३)

खाने पीने की चीजों को अपने खाने से पूर्व यदि हो सके तो वहाँ के उपस्थित लोगों को थोड़ा बहुत देकर सत्कार करो। नहीं तो कम से कम वचनों द्वारा तो उनका सम्मान अवश्य ही कर दो।

(१२४)

जिन शब्दों का आपको शुद्ध उच्चारण न आता हो उन्हें न बोलने का ध्यान रखो। शुद्ध रूप मालूम हो जाने पर ही उन शब्दों का प्रयोग करो। बहुत से लोग संस्कृत, अरबी, फारसी और अँग्रेज़ी आदि भाषाओं को न जानते हुए भी उन भाषाओं के शब्दों का प्रयोग करते हैं—यह अनधिकार चेष्टा करना ठीक नहीं है।

(१२५)

अपने मुंह से शुद्ध, उत्तम, मधुर और शिष्टतायुक्त वाक्यों को ही निकालो। किसी कवि ने कहा भी है—

"वशीकरण यह मंत्र है तज दे बचन कठोर।"

(१२६)

जब कोई मनुष्य ईश्वरोपासना के समय ध्यानावस्थित हो तो उससे अथवा दूसरे मनुष्यों से बातचीत नहीं करनी चाहिये।

(१२७)

बहुत से महाशय ईश्वर-स्मरण के समय बोलते रहते हैं, यहाँ

वहाँ चञ्चल दृष्टि से देखते रहते हैं, जो बोलते नहीं वे संकेतों द्वारा बातचीत करते रहते हैं, यह अनुचित है।

(१२८)

जब कि आप ऊकडूं अर्थात् पैरों के बल बैठे हों तब ध्यान रखो कि आपका कोई गुप्त अंग तो सामने बैठनेवालों को नहीं दिख रहा है।

(१२९)

बिना बोलाये अकारण ही किसी की बातचीत में दखल देना ठीक नहीं है।

(१३०)

फेशन (पहिनावे) में आधे तीतर और आधे बटेर मत बनो। यदि विदेशी पहिनावा पसन्द है तो सिर से पैर तक वही हो। किन्तु आधा देशी और आधा विदेशी ठीक नहीं।

(१३१)

पगड़ी और कुरते के साथ बूट तथा देशी जूतों पर कोट पतलून पहिनना अनुचित है। मेरे विचार से तो जो लोग कोट पतलून पहिनें उन्हें हेट (अंग्रेज टोप) ही लगाना शोभाप्रद होता है।

(१३२)

कान में इत्र का फाहा लगाना भद्दापन है। कान का वह गड्ढा परमात्मा ने इत्र के लिये नहीं बनाया है। यदि इत्र लगाना हो तो कपड़ों में लगा लेना ठीक है।

(१३३)

मुख पर और बालों में इतना अधिक तेल मत लगाओ, जो दिखाई दे। अधिक खुशबूदार तेल लगाना विलासिता का सूचक है।

(१२४)

बहुत से लोग रातदिन में दो चार बार अपने कपड़ों को बदलते हैं। इसमें वे अपनी धनाढ्यता समझते हैं, किन्तु गिरगट की भाँति पोशाकों द्वारा अपने रङ्ग को बदलते रहना बहुरूपियों का ढङ्ग है। हाँ, दिन की और रात की पोशाक अलग २ रखना कोई बुरी बात नहीं है। इसी तरह घर की और ऑफिस की पोशाक अथवा अलग अलग प्रकार के काम करने की अलग अलग पोशाक रखना अनुचित नहीं कहा जा सकता। जो अकारण ही अपनी शेखी दिखाने के लिये वस्त्रों को बदलते हैं, यह अनुचित है।

(१२५)

बड़ी उम्र के लोगों को हाथों में या पैरों में अथवा अन्य भागों में चाँदी के जेवर शोभा नहीं देते। स्वर्ण के आभूषण भी बड़ी उम्र के लोगों को अच्छे नहीं मालूम देते।

(१२६)

किसी आदमी के सामने निस्संकोच हो, शब्द करते हुए अपान-वायु (पादना) छोड़ना असभ्यता है।

(१२७)

अत्यन्त बारीक वस्त्र पहनना ठीक नहीं है। खास करके धोती बारीक कभी मत पहिनो।

(१२८)

यदि मुह में दातुन आदि के न करने से दुर्गन्ध आती हो तो किसी दूसरे के मुंह के पास मुंह मत ले जाओ। अपने मुख की बदबू आपको नहीं मालूम देती है। दाँतों को और मुख को अच्छी

तरह साफ नहीं रखनेवाले और जर्दा, तमाखू, प्याज, लहसुन, मदिरा आदि के सेवन करनेवाले के मुंह से बदबू आती है।

(१३९)

अपने दाँतों को हमेशा साफ और सफेद रखो। जिसके दाँत मैले हैं उसका सारा शृंगार व्यर्थ है। दाँतों को या उनकी सन्धियों को काला रखना और रातदिन पान चबाकर दाँतों की जड़ों का तथा दाँतों का लाल बनाये रखना ठीक नहीं मालूम देता।

(१४०)

भोजन कर चुकने के बाद घृतादि चिकने पदार्थों के कारण हाथ के नाखूनों में हलदी या अन्न वगैरः लगा रहता है, उसे धो पोंछकर साफ कर डालना चाहिये।

(१४१)

अपना धार्मिक चिन्ह समझकर या आयुर्वेदानुसार लाभदायह समझकर अपने माथे पर तिलक–गन्धादि लेपन करो। किंतु अपने मुख को खूबसूरत बनाने के तिलक में ड्राइंग (चित्रकारी फूलपत्ते या आड़ी टेढ़ी रेखाएँ) करना छिछोरपन है।

(१४२)

जो कुछ भी किसी से कहो, उसे हमेशा पूर्ण करने का खयाल रखो। यदि करने का इरादा ही न हो तो किसी को किसी बात के लिये वचन भी मत दो।

(१४३)

बहिनों को चाहिये कि जेवर दिखाने के लिये लहँगा वगैरः वस्त्रों को ऊँचा न पहनें।

(१४४)

बहनों को चाहिये कि विवाह आदि उत्सवों में अथवा अपने नाते रिश्तेदारों को सीठने (गाली युक्त गीत) न सुनावें। भद्दे गाने गाना निर्लज्जता का चिन्ह है ।

(१४५)

सिवाय उन लोगों के जिनकी जाति में, देश में अथवा धर्म में सर नंगा रखते हैं, सिर के बालों में तेल फुलेल डालकर पट्टियाँ बनाकर उन्हें दिखाने के इरादे से नंगे सिर घूमना अथवा उन्हें जान बूझकर पगड़ी, टोपी, साफे आदि से बाहर निकालकर रखना ओछेपन का द्योतक है ।

(१४६)

समय का ठीक ठीक पालन करने की आदत डालो और अपने घरू काम भी ठीक समय पर ही करो । अपने जीवन का एक क्षण भी व्यर्थ न जाने दो । समय पर काम करने के लिये घड़ी एक उत्तम साधन है । यदि आप घड़ी रखते हैं तो समय का मूल्य सीखो । शोभा अथवा शेखी के लिये घड़ी मत रखो ।

(१४७)

जिस किसी से, जिस समय मिलने जुलने के लिये कहो उससे ठीक समय पर मिलो । यदि कोई आवश्यक कार्य आ पड़े तो उस काम को भी छोड़ दो । जिससे मिलने का वादा किया है उससे एक क्षण ही मिलकर अपने आवश्यकीय कार्य के लिये आज्ञा माँग लो, किन्तु अपने वचन को मत खोओ ।

(१४८)

किसी से मजदूरी के दिये पैसों से अधिक मेहनत लेने की इच्छा कदापि न करो ।

(१४९)

किसी शब्द या वाक्य विशेष से चिढ़ने अथवा खीझने की आदत मत डालो। प्राय: ऐसी आदतोंवाले बदमाशों की श्रेणी में गिने जाते हैं।

(१५०)

किसी दूसरे की वस्तु यदि अपने द्वारा बिगड़ जाय अथवा खो जावे तो उस वस्तु के मालिक की जैसे हो सके तैसे तुष्टि करो।

(१५१)

दरवाजों के किवाड़ों को खोलते वक्त या बन्द करते वक्त भड़ाभड़ न पटको।

(१५२)

कुर्सी, स्टूल, तिपाई, मेज़, चारपाई आदि वस्तुओं की ज़ोर ज़ोर से पटका पटकी और खींचातानी मत करो।

(१५३)

बर्त्तनों को उठाते समय या रखते समय उनके आपस में टकराने का या रखे जाने का शब्द मत होने दो।

(१५४)

बरतनों को पैरों से न ठुकराओ, और इस बात का ध्यान रखो कि भूल से भी बरतनों को पैर न लग जावे।

(१५५)

अन्न को और खासकर भोजन के लिये तय्यार किये हुए अन्न को भी कभी पैर से मत ठुकराओ।

(१५६)

यदि किसी मनुष्य को तुम्हारा पैर छू जावे तो उससे, हाथ जोड़कर अपनी इस ग़लती के लिये क्षमा माँगो।

(१५७)

मेले, बाजार अथवा मनुष्यों की भीड़ में चलते समय यदि किसी को आपका धक्का लग जावे तो उससे उसी समय "मुआफ करना" "क्षमा कीजिये" इत्यादि वाक्य कहकर उसके मन को प्रसन्न कर दो।

(१५८)

रात के समय जब कि लोग अपने अपने घरों में नींद ले रहे हों उस समय बाज़ार में या गलियों में ज़ोर ज़ोर से बातें करते हुए निकलना ठीक नहीं है।

(१५९)

सोते हुए मनुष्य के पास इतने जोर से पैर पटककर न चलो फिरो जिससे उसकी नींद खुल जावे; बल्कि बहुत ही आहिस्ता आहिश्ता चलो।

(१६०)

जो आदमी सो रहा हो, उससे किसी तरह की दिल्लगी या छेड़छाड़ मत करो; क्योंकि वह बेसुध है।

(१६१)

अपने द्वारा किये हुए अपराध को निर्भयतापूर्वक स्वीकार कर लो, और तुरन्त ही उसके लिये क्षमा माँगो।

(१६२)

किसी की धरोहर (अमानत) रखी हुई वस्तु, बिना मालिक की स्वीकृति के काम में मत लाओ और न उसे बेचो ही।

(१६३)

अगर कोई तुम्हें गाली दे रहा हो तो तुम भी उसे गाली

न देने लगो। क्योंकि गालियाँ देनेवाला आदमी सभ्य समाज में नीच व्यक्ति गिना जाता है।

(१६४)

जब कोई अपना हितेच्छु आपको कुछ उपदेश वाक्य कह रहा हो तो उसे ध्यानपूर्वक श्रवण करो। उस समय हँसना या अपनी लापरवाही दिखाना अनुचित है।

(१६५)

जूठे मुंह कहीं बाहर नहीं जाना चाहिये, अर्थात् खाने के बाद पानी पीकर या कुल्ली करके ही बाहर जाना चाहिये। देखिये नीति में भी कहा है:—

"नचोच्छिष्टः क्वचिद्व्रजेत्।"

(१६६)

लोगों के चलने फिरने की जगह फूटे काँच के टुकड़े या काँटे मत डालो। बहुत से लोग बँबूल आदि कँटीले वृक्षों की शाखा दतून के लिये काटकर रास्ते में चलते हुए उसके काँटे साफ करते जाते हैं, यह ठीक नहीं। यदि मार्ग में या ऐसी जगह जहाँ लोग घूमते फिरते हों, कोई काँटा वगैरः नजर आवे तो हटा दो। कुओं, तालाबों, नदियों तथा दूसरे जलाशयों में भी काँटे और टूटे काँच मत डालो।

(१६७)

रेल आदि में यात्रा करते समय केवल अपनी सुविधाओं का ही ध्यान मत रखो, बल्कि अपने पास बैठनेवालों की तकलीफ और आराम का भी ख्याल रखो।

(१६८)

रेल की खिड़की में इस तरह से मत बैठो जिससे और लोगों को हवा मिलना कष्टसाध्य हो। और न अपनी सुविधा के लिये जाड़े के मौसिम में बन्द की हुई खिड़कियों को खोलकर बाकी मुसाफिरों को कष्ट पहुँचाओ।

(१७९)

चलती हुई रेलगाड़ी में से बाहर की ओर कुल्ली न करो, न नाक साफ करो और न थूको। क्योंकि रेल के चलने के कारण वायु की गति में विशेषता हो जाती है और उसके फटकार के कारण डब्बों के अन्दर बैठें हुए यात्रियों पर पानी वगैर: के छींटे जा गिरते हैं।

(१७०)

रेल के डब्बे में जब कि लोगों के बैठने के लिये जगह खाली हो तो अपने आराम के लिये दूसरों को आने से मत रोको, लड़ाई झगड़ा मत करो, उनको आने दो; बलिक उन्हें बैठने के लिये बुलालो।

(१७१)

रेल के डब्बे में बिना किसी कारण विशेष के बैठने के स्थान पर टाँगें फैलाकर या अपना सामान फैलाकर मत बैठो। यह ठीक नहीं है कि एक भाई तो खड़ा हो और तुम बैठने की जगह टाँगें फैलाये हो या अपना सामान रखे हुए बड़े ही आराम से बैठे रहो! इसे अनधिकार चेष्टा कहते हैं।

(१७२)

रेल के डब्बे में फर्श पर कफ मत डालो और न थूको। जहाँ

तक हो वहाँ तक फल वगैर: के छिलके डालकर कूड़ा भी न करो।

(१७३)

रेल वगैर: सवारियों में बैठकर मार्ग के आसपास खड़ी हुई बहिनों और माताओं को हाथ पैरों के इशारों से या लज्जाजनक असभ्य बातें कहकर अपनी नीचता का परिचय न दो।

(१७४)

मोटर में, रेल में या ऐसी ही किसी दूसरी सवारी में बैठे हुए लोगों को दिखाकर गन्दे संकेत मत करो।

(१७५)

मुसाफिरखानों, सरायों, धर्मशालाओं तथा ऐसे ही दूसरे सार्वजनिक स्थानों को किसी भी तरह मैला और खराब मत करो। यदि कोई दूसरा करता हो तो उसे नम्रतापूर्वक समझा कर रोक दो।

(१७६)

बिना किसी बीमारी के अपनी आँखों में रात दिन काला सुर्मा लगाना ठीक नहीं है।

(१७७)

पान सुपारी या ऐसी ही कोई दूसरी चीज खाते समय बात-चीत में किसी दूसरे पर थूक न पड़ने पावे, इस बात का ध्यान रखो और अपने वस्त्रों पर भी सुपारी या पान का रस मत गिरने दो।

(१७८)

दिन भर पान मत चरते रहो। बहुत से लोग एक पान के बाद दूसरा और दूसरे के बाद तीसरा, इस प्रकार दिन भर पचासों पान

खा जाते हैं, यह ठीक नहीं है। यद्यपि पान खाना भारतीय सभ्यता है तथापि रातदिन खाते रहना ठीक नहीं।

(१७९)

पान खानेवाले के दाँत लाल हो जाते हैं। अतएव उन्हें साफ रखने का सर्वदा ध्यान रखो।

(१८०)

किसी दूसरे के घर जाकर किसी खाद्य वस्तु को अपने पाने की लालसा से घूरघूर कर मत देखो।

(१८१)

ऐसे स्थान में, जिसके चारों ओर दीवार या अन्य किसी प्रकार की आड़ हो जैसे बागड़ या तारों का फेन्सिङ्ग (Fencing) रास्ता छोड़कर अन्य मार्ग से मत घुसो। नीति भी यही कहती है—

"अद्वारेण च नातीयाद्ग्रामं वा वेश्मवावृतम् ॥"

(१८२)

दूसरे का किया हुआ मज़ाक सहने की ताकत हो तो मज़ाक करो, वर्ना चुप रहो। मज़ाक प्रायः चित्त की प्रसन्नता के लिये होता है, किन्तु रातदिन मज़ाक करते रहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि एक कहावत है—

"रोग का घर खाँसी—
और लड़ाई का घर हाँसी ॥"

(१८३)

जिनसे आपका दिल्लगी मज़ाक का कुछ सम्बन्ध हो उन्हीं से मर्यादापूर्वक हँसी दिल्लगी करो। ऐसे व्यक्ति से जिससे आपने कभी हँसी मज़ाक न किया हो, मत करो और न अपने पूज्य,

विद्यावृद्ध, वयोवृद्ध, पदवृद्ध और वर्णवृद्ध मनुष्यों से दिल्लगी करो।

(१८४)

नहाते समय या वस्त्र धोते समय इस बात का ध्यान रखो कि किसी पर छींटे न गिरें।

(१८५)

बहुत से लोगों की आदत होती है कि बातचीत करते समय बीचबीच में "क्या नामरे" "जो है सो" "या प्रकार करके" इत्यादि शब्दों की टेक सी लगाते हैं। यह आदत ठीक नहीं; है इसे बिलकुल भुला दो।

(१८६)

सोते समय इस बात का खूब ध्यान रखो कि आपका हाथ कहीं मूत्रेन्द्रिय अथवा अन्य किसी ऐसे ही गुप्त स्थान पर न रखा हो।

(१८७)

सड़कों पर जहाँ कि लोग चलते फिरते हों वहाँ बड़े बड़े जोर से क़हक़हा मारकर मत हँसो।

(१८८)

ऐसे शब्द अथवा वाक्यों का प्रयोग न करो जिन्हें सुननेवालों को लज्जा उत्पन्न हो।

(१८९)

कई महाशय प्रेम के कारण अबोध बालकों का मुख चूमकर अपने प्रेम का परिचय देते हैं, यह बिलकुल अनुचित है। भारतीय सभ्यता केवल मस्तक सूंघने की आज्ञा देती है।

(१९०)

जहाँ स्त्रियाँ हों, वहाँ बिना किसी कारण विशेष के लँगोट बाँधकर केवल धोती ही पहिनकर नंगे बदन घूमना अनुचित है।

(१९१)

जहाँ पर स्त्रियाँ हों, वहाँ आपस में दिल्लगी मज़ाक़ भी नहीं करना चाहिये। यही बात स्त्रियों के लिये भी है, वे भी पुरुषों के सामने अपनी निर्लज्जता न दिखावें।

(१९२)

भले ही कितना भी किसी पुरुष से प्रेम हो किन्तु उसकी स्त्री के पास अकेले में पवित्र भाव लेकर भी मत जाओ।

(१९३)

बहुत से मनुष्य नंगे होकर सोते हैं, यह ठीक नहीं है। मनुष्य कभी कभी नींद में ऐसा चौंक पड़ता है कि शय्या पर से भागने और दौड़ने लगता है। यदि उस समय नंगा हुआ तो आप ही खुद विचार लीजिये कि उसे कितना लज्जित होना पड़ेगा! इसीलिये मनुजी ने कहा है—

"न च नग्न शयीतेह।"

(१९४)

कई लोग थूकने के लिये पीकदानी नामक पात्र अपने पास रखते हैं। उसे हाथ में उठा उठाकर थूकते रहते हैं, और कई तो उसी पात्र के किनारे से अपने मुख की लार तक भी पोंछ डालते हैं, यह ठीक नहीं मालूम देता।

(१९५)

बिना आज्ञा प्राप्त किये किसी की सवारी, पलङ्ग और आसन पर मत बैठो।

(१९६)

चलते समय कंकर को, मिट्टी को, लकड़ी को या अन्य किसी प्रकार की वस्तुओं को पैर से ठुकराते हुए चलने का स्वभाव मत डालो। यह आदत प्रायः फुटबाल के खिलाड़ियों में होती है, अतएव फुटबाल प्रेमी विशेष ध्यान रखें।

(१९७)

रेल, तारघर, डाकघर, नाटकघर, सीनेमा, सभा, पुस्तकालय, कारखाने आदि नोटिसों में लिखी हुई सूचनाओं का उल्लंघन कदापि मत करो।

(१९८)

जिस स्थान में प्रवेश करने की मनाही के लिये कहीं कुछ लिखा हुआ हो या अन्य कोई संकेत हो जैसे "No Admission" "अन्दर आने की इजाजत नहीं है" तथा लाल रङ्ग का लालटेन वगैर: जलाया गया हो तो उसकी अवहेलना करके अन्दर नहीं घुसना चाहिये।

(१९९)

किसी के यहाँ फर्श पर जाते समय इस बात का ध्यान रखो कि अपने पैर तो मैले नहीं हैं। ऐसा न हो कि आप बिना ध्यान रखे ही मैले पैर बिछौने पर चले जावें और वह खराब हो जावे।

(२००)

ऐसी फटी जुराबों से तो, जिनमें से पैरों की एड़ियाँ बाहिर निकलती हों, नहीं पहनना ही अच्छा है।

(२०१)

बहुत से लोग फैशन के रोग में ग्रस्त होने के कारण जुराबें

पहनते हैं। गर्मी के दिनों में पसीने, धूल और चमड़े के जूतों के संयोग से यदि जुर्राबें दूसरे दिन धोकर साफ न की जावें तो उन में एक प्रकार की दुर्गन्ध पैदा हो जाती है। ऐसे लोग जब जूते खोलकर किसी के पास बैठते हैं तो बहुत दूर तक आसपास अपनी जुर्राबों की बदबू से लोगों के दिमागों में बेचैनी पैदा करते हैं। इस बात का अनुभव उन जुर्राबधारी महाशय को नहीं होने पाता क्योंकि यह बदबू धीरे २ उनके दिमाग को सुहाने लगती है।

(२०२)

स्नान करते समय यदि एकान्त न हो तो अपने गुप्त स्थानों को वस्त्र रहित करके निर्लज्जतापूर्वक साफ न करो और न वस्त्र सहित होने पर बारंबार किसी की ओर देखते हुए रगड़ रगड़ कर साफ करो। जहाँ स्त्रियाँ हों वहाँ तो विशेष सावधानी रखो।

(२०३)

बिलकुल नंगे होकर कभी मत नहाओ। यदि साधू बैरागी ऐसा करें तो करने दो। क्योंकि आजकल के बहुत से साधु रात दिन नंगे रहते हैं, तो स्नान यदि नग्न रूप में किया तो आश्चर्य ही क्या ?

(२०४)

स्नान करते समय इस बात का ध्यान रखो कि लिंगेन्द्रिय आदि गुप्त स्थान कपड़े के अन्दर से भी लोगों को नहीं दिखने पावें। स्मरण रहे कि पानी में भीग जाने पर भीतरी अंग साफ दिखाई पड़ने लगता है।

(२०५)

धोती, पजामा या लङ्गोट आदि पहिनते समय इस बात का

ध्यान रखो कि किसी मनुष्य को अपना कोई गुप्त अंग न दिख सके।

(२०६)

कभी पासे मत खेलो और न कभी हाथों में जूते लेकर चलो। अर्थात् उक्त दोनों वस्तुओं को कभी हाथ में न लो। महर्षियों ने भी कहा है—

"नाक्षैः क्रीडत्कदाचित्तु स्वयं नोपानहौ हरेत्।"

(२०७)

चरपाई पर बैठकर या खाने की वस्तु को हथेली में रखकर अथवा भोजनपात्र को आसन पर रखकर भोजन मत करो। मनुजी भी आज्ञा देते हैं कि—

"शयनस्थो न भुंजीत न पाणिस्थं न चासने"

(२०८)

बातचीत करते समय मुंह, आँख, नाक और हाथ वगैरः के विशेष इशारे मत करो। कोई कोई मनुष्य तो अपना शरीर जैसे कमर वगैरः भी लचकाते हैं, यह बहुत ही बुरी आदत है।

(२०९)

आने जाने के मार्ग में मत सो जाओ। जहाँ तक हो सके ऐसी जगह भी बैठो मत।

(२१०)

पशु-पक्षियों के मैथुन को देखने के लिये खड़े न रह जाओ, बल्कि उधर से मुंह फेरकर चले जाओ—हट जाओ।

(२११)

हमारे देश में जूते पहने हुए खाना पीना असभ्यता समझी गई है। स्मृतिकारों ने भी कहा है—

"सोपानत्कश्च यद्भुंक्ते तद्वै रक्षांसि भुन्जते।"

(२१२)

ऐसी भीड़ में जिसे कोई दबा रहा हो या हटा रहा हो, उसमें फिर उसी ओर जिधर से कि हटाये गये हो जाना बेहूदगी में शामिल है।

(२१३)

जिससे जिस बात के लिये जितने पैसे ठहरा लिये हों, उसे उतने ही दो। उसमें से एक फूटी कौड़ी भी कम देने की इच्छा तक न करो।

(२१४)

धोबी, चमार, मेहतर, कुम्हार, भाट, कापड़ी, राय, नाई आदि मनुष्यों की मजदूरी के दाम पूरे और प्रसन्नतापूर्वक दो। इन लोगों की प्रसन्नता से कीर्ति और नाराजी से अपकीर्त्ति होने में देर नहीं लगती।

(२१५)

बहुत से लोग बातचीत करते समय अपनी आँखें मटकाते-चमकाते हैं। यह आदत ठीक नहीं समझी जाती।

(२१६)

यदि खुजली चले तो अंग पर से कपड़ा हटाकर न खुजलाओ। कई महाशय जाँघ वगैरः खोलकर खुजलाते हैं, यह बहुत ही भद्दी आदत है।

(२१७)

लोगों के सामने घुटने खोलकर मत बैठो। कटि के नीचे ऐसा वस्त्र धारण न करो जो घुटनों से ऊँचा रहे।

(२१८)

चोटी को, टोपी साफे या पगड़ी से बाहिर निकली हुई मत रहने दो।

(२१९)

अवस्थानुसार पोशाक भी बदलते जाओ। बच्चों की सी गोटे, कलाबत्तू अथवा सलमेसितारे से मढी हुई टोपी, जवानी या बुढ़ापे में अच्छी नहीं मालूम देती।

(२२०)

यदि कोई सत्कार के लिये पान, सुपारी, लौंग, इलायची, इत्र वगैरः दे तो उसे धन्यवादपूर्वक स्वीकार करो। ले चुकने पर या लेने के पूर्व दाता को हाथ जोड़कर प्रणाम करो।

(२२१)

सत्कार के लिये दी जानेवाली वस्तु को खुद अपने हाथों से किसी को उठाकर न दो बल्कि उसके आगे कर दो वह स्वयम् ले लेगा।

(२२२)

यदि तुम्हारे आगे कोई सत्कार प्रदर्शनार्थ वस्तु आवे तो उसे अधिक रूप में लेने की इच्छा न करो बल्कि इस बात का ध्यान रखते हुए बिलकुल ही थोड़ी लो कि वह वहाँ के उपस्थित सभी महाशयों को बराबर बराबर मिल सके।

(२२३)

यदि अपने घर आये हुए महाशय का आतिथ्य पान सुपारी आदि से करना है, तो या तो उसके आते ही करो अथवा उसके जाने के समय करो।

(२२४)

यदि कोई महाशय आपके यहाँ आवें और आप किसी कारण-वश उसके पास नहीं बैठ सकते हों और वह नहीं उठना चाहता हो तो उसे कुछ भी न कहकर पान सुपारी दे दो। यदि वह समझदार होगा तो समझ जावेगा और उठकर चल देगा।

(२२५)

अगर जाते ही गृह-स्वामी ने आपको पान सुपारी नहीं दी हो और कुछ देर बैठने के बाद दी तो उस आतिथ्य को स्वीकार करके फिर वहाँ से चल देना ही ठीक है।

(२२६)

एक बार अपने मुँह से चलने के लिये कहकर फिर वहाँ ठहरकर बातें न करने लगो, वहाँ मत ठहरो बल्कि चले ही जाओ।

(२२७)

"आज्ञा हो" "इजाजत दीजिये" आदि मानसूचक वाक्यों को बोलकर ही किसी मनुष्य से पृथक् हो—विदा लो।

(२२८)

कुँए आदि जलाशयों पर जूते पहने हुए नहीं जाना चाहिये और खासकर पनघट का बहुत ध्यान रखना चाहिये।

(२२९)

पवित्र स्थानों में जैसे मन्दिर, मस्जिद वगैरः में जूते पहने नहीं जाना चाहिये, भले ही आप उस स्थान की इज्जत न करते हों।

(२३०)

किसी के सर के बाल मत खींचो और न सर में मारो ही। प्राय: ऐसा देखा जाता है कि जब कभी कोई सर के बाल उस्तरे

से साफ कराता है तो उसके मित्रवर्ग उसकी घुटी खोपड़ी में चपतें मारते हैं, यह ठीक नहीं है। मनु ने भी इन्कार किया है—

"केशग्रहान्प्रहारांश्च शिरस्येतान्विवर्जयेत्।

(२३१)

किसी की पगड़ी, टोपी या साफ़े के गिर जाने पर मत हँसो।

(२३२)

रेल में या ऐसी सवारी अथवा स्थानों में जहाँ पैसे देकर जाने आने का नियम बना हो, वहाँ बिना पैसे दिये अथवा बिना टिकट प्राप्त किये मत जाओ।

(२३३)

अपने पास जिस दर्जे का टिकट हो या जिस दर्जे के दाम दिये हों उससे ऊँचे दर्जे के स्थान में बैठने की कोशिश मत करो। बिना किसी आवश्यकीय कारण के अथवा अधिकारी की बिना आज्ञा पाये ऐसा करना चोरी और धोखे की हद तक पहुँचाता है।

(२३४)

किसी के पहिनने के वस्त्रों को और खासकर सिर पर धारण करने के वस्त्रों को पैर से न छुओ। यदि भूल से पैर छू भी जावे तो अपनी भूल स्वीकार करने के लिये उसे उठाकर अपने सिर को लगाओ।

(२३५)

अपने वयोवृद्ध, पूज्य जैसे पिता, गुरु, बड़ा भाई आदि के वस्त्रों को न पहनो। खासकर सिर पर धारण करने के वस्त्रों का अधिक ध्यान रक्खो। इनके जूते और खड़ाऊँ भी मत पहनो।

(२३६)

जूते, वस्त्र, जनेऊ, आभूषण और माला को, यदि ये दूसरे के धारण किये हुए हैं तो आप मत पहिनो । स्मृतिकार कहते हैं—

"उपानहौ च वासश्च धृतमन्यैर्नधारयेत् ।
उपवीतमलंकारं स्रजं करकमेव च ॥"

(२३७)

व्याख्यान देते समय अपने हाथ पैरों और मुख आदि अंगों को अकारण ही अधिक मत हिलाओ । जल्दी जल्दी सपाटे से भाषण मत करो । अपने हाथों को बारम्बार टेबल पर मत पटको और खूब फैली टाँगें करके मत खड़े हो । अपने खड़े रहने का ढङ्ग स्वाभाविक ही हो इस बात का ध्यान रखो ।

(२३८)

टेबल और कुर्सी के पास खड़े होकर व्याख्यान—धर्मोपदेश देना हमारे भारतवर्ष की सभ्यता नहीं है, यह पश्चिमीय ढङ्ग है । हमारे देश की सभ्यता एक उच्च आसन पर बैठकर उपदेश करने की आज्ञा देती है ।

(२३९)

व्याख्यान देते समय किसी व्यक्ति-विशेष की ओर या दिशा विशेष की ओर अपनी दृष्टि लगाकर व्याख्यान न दो । बल्कि उस स्थान में उपस्थित सब लोगों की ओर समय समय पर देखते रहो ।

(२४०)

तालाबों, नदियों, कुओं, बावड़ियों और ऐसे ही अन्यान्य जलाशयों में पत्थर मत फेंको ।

(२४१)

कुओं पर या जलाशयों के घाटों पर कफ वगैरः मत डालो, कुल्ली न करो और मिट्टी वगैरः न फैलाओ।

(२४२)

किसी को अचानक चमकाने का प्रयत्न मत करो। कभी कभी इसका ऐसा भयंकर परिणाम होता है, जिसका कि चमकाने वाले को स्वप्न में भी ध्यान नहीं था।

(२४३)

अपने खानगी बरतावों को और ऐसी ही बातों को लोगों के सामने प्रकट मत करो। क्योंकि—

"तुलसी निज मन की व्यथा, भूल न कहिये कोय।
सुनि अठिलैहैं लोग सब, बाँटि न लेहै कोय!"

(२४४)

चोरी मत करो। यह महान निंद्य कार्य है। इसके बराबर बुरा काम नहीं है। इसका फल भी बड़ा ही बुरा होता है।

(२४५)

पराई स्त्री को अपनी माता के समान समझो। पराये धन को धूल के बराबर समझो और प्राणी मात्र में अपनी सी जान देखो अर्थात् किसी को कष्ट न पहुँचाओ।

(२४६)

चकलों में जहाँ व्यभिचारी स्त्रियाँ और वेश्याएँ रहती हों, उस जगह मत घूमो फिरो। उस रास्ते से यदि जाने आने का काम पड़े तो दूसरे मार्ग से जाओ, भले ही चक्कर पड़े।

(२४७)

बाजारों में, गलियों में, अवारे की तरह बेकार मत घूमो। यदि कुछ काम न हो तो चुपचाप अपने घर में बैठे रहो।

(२४८)

यदि आप ठाले में हों तो किसी अपने मित्र के यहाँ जाकर उसके काम में विघ्न मत डालो। यदि आपका मित्र लिहाज के कारण आपसे कुछ न कहता हो तो आप उसके समय का ध्यान रखो। अपनी व्यर्थ की बातों में उसका अमूल्य समय बरबाद मत करो।

(२४९)

किसी पाठशाला में जाकर पढ़ानेवाले से अकारण ही बहुत देर तक बातचीत न करो। जहाँ तक बन सके किसी साधारण काम के लिये भी स्कूल में न जाओ। आप अपनी बात को पत्र द्वारा भी अध्यापक महाशय को सूचित कर सकते हैं।

(२५०)

अपने पूज्य या मुखिया व्यक्ति के खड़े होने पर सब लोगों को जो वहाँ मौजूद हों, खड़े हो जाना चाहिये।

(२५१)

यदि किसी को सुनाना हो तो, पढ़ते समय ज़ोर से पढ़ना ठीक है, नहीं तो व्यर्थ ही बोलने से या होंठ हिलाने से कोई फायदा नहीं।

(२५२)

अकारण ही, जिससे कुछ भी सम्बन्ध न हो, अपने दिल की बातें न कहते फिरो।

(२५३)

किसी के गुप्त कार्य अथवा बात को यदि आप जानते हैं तो बिना किसी प्रबल कारण के क्रोध में अथवा अविचार के कारण प्रकट न करो ।

(२५४)

जिस किसीने अपने साथ कभी भी उपकार किया हो उसके उपकार का बदला, समय पाते ही, अवश्य चुका दो ।

(२५५)

यदि आप बीमार नहीं हैं और लेटे हुए हैं; उस समय यदि कोई आदमी आपसे मिलने आता है तो उठ बैठो ।

(२५६)

यदि आप चारपाई पर बैठें अथवा लेटे हैं तो अपने से मिलने के लिये आये हुए महाशय को अपनी चारपाई के सिराहने की ओर बिठाओ और आप स्वयम् पगाँत की तरफ बैठो ।

(२५७)

टेबल (मेज) वगैरः बैठने की वस्तु नहीं है, इसलिये बैठने की जगह पर ही बैठो । बहुत से महाशय लिखते हुये व्यक्ति की टेबल पर ही लद जाते हैं ।

(२५८)

धोती में या पाजामे में जब देखो तब अपनी लिगेंद्रिय को मसलते रहने या छूते रहने की आदत मत डालो ।

(२५९)

चलते हुए, हाथ में हुक्का उठाये पीते हुए घूमना अनुचित है। कई लोग पाखाने में भी हुक्का पीते रहते हैं, यह बहुत बुरा है ।

(२६०)

बहुत से लोग पाखाने में बैठे हुए दतून से अपने दाँत साफ किया करते हैं, यह ठीक नहीं है।

(२६१)

मन्दिरों, धर्मशालाओं, सूने मकानों, रेल के डब्बों, डाकखानों और पाखानों में कोयले से, पेन्सिल से मनचाहा लिख देना, या फोश गालियाँ लिखना बेहूदापन है।

(२६२)

किसी वस्तु को लेने के समय, जब कि देनेवाला सत्कार रूप में आपकी सेवा कर रहा हो तो, आप अपने वयोवृद्ध अथवा पूज्य पुरुषों को यदि उपस्थित हों तो देने या दिलाने के बाद खुद ग्रहण करो।

(२६३)

बिना किसी के कहे किसी के घर जाकर उच्चासन पर बैठने का कदापि प्रयत्न न करो। आसन पर बैठने मात्र से ही मनुष्य छोटा या बड़ा नहीं समझा जा सकता। महापुरुष धूल में बैठकर भी छोटा नहीं हो सकता और मूर्ख अथवा अमान्य व्यक्ति अत्युच्च आसन पर बैठकर भी महापुरुष नहीं हो सकता। कौआ ध्वज-दंड के अग्रभाग पर बैठकर भी उतनी शोभा नहीं पाता जितनी कि हंस किसी तालाब के किनारे कीच में शोभा पाता है।

(२६४)

नाई लोग प्रायः हजामत बनाते समय चोटी, मूँछ, नाक तथा मुँह की खाल को खूब जोर से खींचतान कर बनाते हैं। ऐसे नाई असभ्य और गँवार कहे जाते हैं।

(२६५)

अपनी खुद की पुस्तक पर अथवा किसी दूसरे की पुस्तक पर जो मन में आवे सो न लिखो। क्योंकि पुस्तकें लिखने के लिये नहीं, बल्कि पढ़ने के लिये हैं।

(२६६)

कई लोगों की आदत होती है कि लेखनी को हाथ में लेकर कुछ न कुछ लिखने लग जाते हैं। व्यर्थ ही कागज खराब करते हैं। धीरे धीरे यह मर्ज इतना बढ़ जाता है कि अच्छे से अच्छे कागज और पुस्तकें वे खराब करने में ज़रा भी नहीं हिचकिचाते, यह ठीक नहीं।

(२६७)

मुख में तिनका, कागज, वगैरः डालकर चबाते रहना ठीक नहीं है, यह लक्षण अशुभ तथा दीनतासूचक है।

(२६८)

यदि कोई अनजान भी, जिससे आपका कुछ भी सम्बन्ध न हो, वह आपत्तिवश या असमर्थता के कारण किसी काम को न कर सकता हो और वह कार्य उचित हो तथा आपकी अंतरात्मा की प्रथम ध्वनि उसे करने की आज्ञा देती हो, तो अवश्य करो।

(२६९)

यदि आप किसी की निस्स्वार्थ सेवा थोड़ी बहुत भी तन से, मन से अथवा धन से कर सको, तो कदापि न चूको।

(२७०)

जिसके पास जो वस्तु न हो, अथवा होने पर भी जिसके पाने की आशा बहुत कम हो ऐसी वस्तु किसीसे देने के लिये न कहो।

(२७१)

इस बात का ध्यान रखो कि अपने मुँह से कही हुई बात कभी निष्फल न जावे। यह तभी हो सकता है जब कि अपनी बात का आप खुद पूर्ण करने का ध्यान रखें और बात को आगा पीछा सोच कर ही मुँह से निकालें।

(२७२)

शरीर पर लगे हुए दाग को पानी की जगह थूक लगाकर साफ न करो।

(२७३)

जो वस्तु जिससे लो वह उसे ही लौटाओ अर्थात् बिना वस्तु के सच्चे अधिकारी की आज्ञा प्राप्त किये किसी दूसरे को मत दो।

(२७४)

जिसका अपराध हो, उसे ही उसके विषय में जो कुछ भला बुरा कहना हो कहो। व्यर्थ ही किसीका दोष किसी और के माथे मढना ठीक नहीं।

(२७५)

इतना जल्दी जल्दी मत बोलो जो सुननेवाले की समझ में न आवे।

(२७६)

बहुत आहिस्ता और मन्द स्वर से भी मत बोलो जो लोगों को सुनाई न दे और लोग सुनते हुए उकताने लगें।

(२७७)

जहाँ कहीं किसी एक विषय पर चर्चा चल रही हो उसमें विषयांतर पैदा करनेवाली बात मत छेड़ो, न बातचीत ही करने लगो।

(२७८)

होली नामक हिन्दू त्यौहार के दिनों में गोबर, कीचड़ मूत्र मलादि गन्दी वस्तुएँ मत फेंको ।

(२७९)

जो लोग होली के उत्सव को नहीं मानते हैं उन लोगों पर रंग, पानी, गुलाल आदि वस्तुएँ बिना उनकी इजाज़त के मत डालो ।

(२८०)

होली के दिनों में कुछ लोग आलू, गाजर, शलगम, लकड़ी वगैर: में गालियाँ खोद कर मुहर बना लेते हैं और आनेजाने वालों के वस्त्रों पर रंग लगाकर छापे देते हैं, यह अनुचित है ।

(२८१)

होली के दिनों में बहुत से लोग फोश गालियों द्वारा बड़े से बड़े और सभ्य पुरुष का सम्मान करने को अपने जीवन का उद्देश मान लेते हैं—और अपने को उस मंडली का लाल बुझक्खड़ मान लेते हैं । यह उन लोगों की भूल है । किसी भी समय किसी भी रूप में गालियाँ बकना हमेशा नीच कार्य है ।

(२८२)

जहाँ-ज्ञान चर्चा हो रही हो—जैसे कथा, मौलूद, वाज़, उपदेश व्याख्यान वगैर: वहाँ सोओ मत । यदि नींद आने लगे तो उठकर अपने घर चल दो ।

(२८३)

कथा वगैर: में या जहाँ ज्ञान-चर्चा हो रही हो, वहाँ अपनी बातचीत मत करने लगो । चुपचाप बैठे सुनते रहो ।

(२८४)

कथा वगैर: के पास या जहाँ लोग बैठकर या खड़े होकर किसी प्रकार का उपदेश सुन रहे हों, वहाँ बाजा बजाकर अथवा अन्य किसी प्रकार का शोरगुल मचाकर उसमें विघ्न मत डालो।

(२८५)

यदि कोई व्याख्यान दे रहा हो और आपको उसके वक्तव्य के सम्बन्ध में कुछ पूछना हो तो उसी समय बीच में न बोल उठो। बल्कि उसके चुप हो जाने पर नम्रतापूर्वक उससे आज्ञा लेकर देश-कालानुसार बातचीत करो।

(२८६)

यदि सभा का सभापति चुना गया है तो जब कभी आप बोलें सभापति को सम्बोधन किये बिना कुछ भी न कहें। क्योंकि उस समय सभापति वहाँ की बातों का उत्तरदाता है।

(२८७)

बिना किसी आवश्यकीय कारण के किसी सभा या समाज में से एकदम उठकर मत चल दो।

(२८८)

स्वधर्मेतर मनुष्यों से घृणा मत करो बल्कि उनकी बात को ध्यानपूर्वक सुनो, और यदि कुछ शंका हो तो उसे नम्रतापूर्वक निवृत्त कर लो। उसके प्रति घृणा प्रकट करना ओछे दिल का भाव प्रकट करना है।

(२८९)

धार्मिक तथा अन्य इसी प्रकार की बातचीत करते समय जरा जरा सी बात पर क्रोध न करो और न जोर जोर से बोलने ही लगो।

(२९०)

पुस्तकों पर मत बैठो, उन्हें पैर न छुआओ और उनके पृष्ठों को न मुड़ने दो।

(२९१)

पुस्तकों की गोलमोल घड़ी करके या तोड़ मरोड़कर जेब में रखकर ले जाने अथवा हाथ में ले जाने का ढंग बहुत ही बुरा है। ऐसा करने से पुस्तक बदशक्ल बन जाती है।

(२९२)

बिना आज्ञा प्राप्त किये किसी की वस्तु को मत उठाओ। इस बात का ध्यान खूब अच्छी प्रकार रखना चाहिये।

(२९३)

हँसी मजाक में भी किसी की वस्तु को उसके मालिक की गैरहाजिरी में मत उठाओ, न छुपाओ। यह कभी कभी चोरी की मियाद तक पहुँच जाता है।

(२९४)

यदि दो व्यक्ति आपस में बातचीत कर रहे हों तो आप बिना आज्ञा प्राप्त किये उनके पास मत जाओ। इतनी दूर खड़े रहो कि उनका भाषण आप न सुन सकें।

(२९५)

किसी के मकान में घुसने के पूर्व, अन्दर आने की इजाजत माँगो। बाद में भीतर प्रवेश करो। अंधाधुंध घुसते चले जाना ठीक नहीं।

(२९६)

यदि आप किसी के मकान में घुस गये हों और अन्दर जाने

पर मालूम हो कि वह सूना है तो, फिर उसमें से चुपचाप मत निकल जाओ बल्कि वहाँ पर किसी मनुष्य के आने तक ठहरे रहो।

(२९७)

किसी की वस्तु को लालचवश अपने लिये मत उठाओ। कभी कभी कई लोग किसी मनुष्य की आदत देखने के लिये भी कुछ वस्तु रख देते हैं और इसी पर से उसकी ईमानदार और बेईमान तबियत का पता लगा लेते हैं।

(२९८)

असभ्यों की संगति में नहीं रहना चाहिये; क्योंकि संसार कसौटी है। वह संगति के कारण आपको भी खोटा कहेगा।

(२९९)

बहुत से लोग किसी प्रकार का नशा नहीं करते किन्तु होली के दिनों में वे अपने इस प्रण को शिथिल कर देते हैं और भंग, माजूम—(माजून), भंग की बनाई हुई मीठी फंकी वगैर: सेवन करने लगते हैं, यह बात अच्छी नहीं है क्योंकि नशा का किसी समय में भी किया जाना बुरी आदत है।

(३००)

नशेबाजों की संगति न करो। उन्हें यदि अपने उपदेशों द्वारा सुमार्ग पर लाना हो तो भले ही उनके पास बैठो उठो; किन्तु इसके पूर्व, लोगों में अपनी सच्चरित्रता का पक्का सिक्का जमा दो।

(३०१)

व्यभिचारियों से—(वह पुरुष हो वा स्त्री) आवश्यकता आ पड़ने पर भी बातचीत करना टाल दो। यदि अत्यन्त ही आवश्यकता आ पड़े तो डेढ़ (थोड़ी सी) बात करके अलग हट जाओ।

(३०२)

"न कुर्वीत वृथा चेष्टां न वार्यञ्जलिनापिवेत्।
नोत्संगे भक्षयेद्भक्षान्न जातुस्यात्कुतूहली।"

अर्थात्—व्यर्थ के कामों में हाथ मत डालो, अंजलियों से जल मत पीओ। खाने की वस्तु को गोदी में रखकर मत खाओ और न कभी बिना प्रयोजन किसी के काम को देखने भालने की इच्छा करो।

(३०३)

पेशाब या पाखाने के वक्त ऐसी जगह बैठो जहाँ एकाएक किसी की दृष्टि न पड़ सके।

(३०४)

माताएँ और बहिनें अपने नाते रिश्तेदारों से यदि लज्जा के कारण घूंघट निकालती हैं तो उन्हें धोबी, भंगी, चूड़ियोंवाले, गोटे वाले और घर के नौकरों से भी लज्जापूर्वक बरताव करना चाहिये।

(३०५)

अपने घर लोगों से बनावटी शर्म दिखाना और बाहिरी लोगों से खुल्लमखुल्ला बातचीत करना स्त्रियों के शील में सन्देह पैदा करनेवाली बात है।

(३०६)

पतलून या बिरजिस पहिननेवाले महाशय प्रायः खड़े होकर पेशाब करते हैं किन्तु यह बड़ी बुरी बात है। इसलिये खड़े होकर पेशाब मत करो।

(३०७)

लँगड़े, लूले, काने, अन्धे और इसी तरह के अंगहीन दीन मनुष्यों की नकल मत करो—उन्हें न चिढ़ाओ।

(३०८)

पागल, बेहोश तथा कोढ़ी मनुष्य को मत छेड़ो।

(३०९)

तोतले या अटक अटक कर बोलनेवाले की नकल मत करो क्योंकि यह उसके वश की बात नहीं है—यह तो ईश्वर की कृपा है।

(३१०)

जो मनुष्य जिस भाषा को नहीं समझता उसके आगे उस भाषा का बोलना ठीक नहीं।

(३११)

सभा सोसाइटियों में बहुमत का ध्यान रखते हुए अपना मत बहुत सोच बिचार के साथ प्रकट करो।

(३१२)

पान वगैर: में दिल्लगी के लिये कोई खराब वस्तु रखकर किसी को मत खिलाओ। कई लोग मुंह काला करने के लिये पान में हीरा-कसीस रखकर खिला देते हैं—यह अनुचित है।

(३१३)

तमाखू का खाना पीना सभ्यता की सभ्यता को लांछन लगाता है। खास करके चिलम पीना बहुत ही घृणित काम है। तमाखू खाने पीने का निषेध धर्मशास्त्रों ने भी बड़े जोर के साथ किया है।

(३१४)

किसी काम के करने में शीघ्रता मत करो, बल्कि खूब सोच विचारकर उसके अंतिम परिणाम का ध्यान रखते हुए करो। क्योंकि—

"बिना बिचारे जो करे सो पाछे पछताय।"

(३१५)

यदि किसी की भूल से अपना थोड़ा बहुत नुकसान हो गया हो तो जान बूझकर उसी समय उसका नुकसान करने का इरादा मत करो।

(३१६)

भीख मत माँगो। यदि भीख से ही अपना उदर पोषण करते हो तो फिर तन मन से प्राणीमात्र का शुभचिंतन करते हुए अपना जीवन सामूहिक सेवा में लगा दो। भीख माँगकर खाना और परोपकार से जी चुराना कृतघ्नी पुरुषों का काम है।

(३१७)

ब्राह्मण प्रायः भीख माँगते फिरते हैं, यह अनुचित है। ब्राह्मणों के लिये भीख निंद्य कार्य कहा है। दान लेना ब्राह्मणों के छः कर्मों में से एक माना है किन्तु दान और भिक्षा में अन्तर है। दान माँगा नहीं जाता है—भीख माँगी जाती है। अतएव ब्राह्मण तभी दान ले जब कि कोई स्वयं देता हो। नहीं तो ब्राह्मण का दान लेना अपने धर्म से पतित होना है।

"प्रतिग्रहेण नश्यंति वारिणा इव पावकः।

(३१८)

भीख माँगते समय लज्जा आनी चाहिये। क्योंकि जिससे भीख माँगी जाती है उसे हमारे बाप का कर्जा नहीं देना है। हाँ, परमार्थ के लिये माँगना शर्म की बात नहीं है—

"वन्दिनो दान मिच्छन्ति भिक्षामिच्छन्ति पंगवः।
इह सत्पुरुषा सिंहा अर्जन्ति स्वपौरुषात॥"

(३१९)

यदि कोई सत्कार प्रदर्शनार्थ आपको किसी वस्तु के लेने को कहे तो चटपट उसे लेने को उतारू मत हो जाओ।

(३२०)

किसी के जेब में से दिखता हुआ रूमाल, पेन्सिल, काग़ज या पुस्तक वगैरः न खींचो।

(३२१)

किसी की दैनिक दिनचर्या जो उसने अपनी नोटबुक या डायरी में लिखी हो उसके जीवित रहते अथवा बिना उसकी आज्ञा के कदापि मत देखो।

(३२२)

किसी के पत्रव्यवहार को पढ़ने या जानने की इच्छा करना बड़ी भारी ग़लती है।

(३२३)

यदि भूल से किसी की कुछ वस्तु आपके पास आ गई हो तो तुरन्त उसे उसकी चीज़ लौटा दो। स्मरण रहे कि कभी कभी परीक्षा के लिये भी लोग अधिक वस्तु दे देते हैं।

(३२४)

किसी की वस्तु खो जाने पर या गिरजाने पर यदि आपको मिल जावे तो आप उसके मालिक को उसे लौटा दो। यदि मालिक का पता न हो तो उसे अपने पास मत रखो बल्कि ऐसी संस्था या सरकारी विभाग में दे दो जो वहाँ तक उसे पहुँचा सके। जैसे सेवासमिति या पुलिस।

(३२५)

अपने पूज्य और गुरुजनों से क्रोध में भी कटु भाषण न करो, बल्कि सदा विनीत भाव से रहो। उनके साथ लड़ाई झगड़ा और वितण्डावाद न करो।

(३२६)

माता, पिता, गुरु और पूज्य पुरुषों के चरणों का नित्य प्रातः काल स्पर्श करो।

(३२७)

गुरु के चरण स्पर्श करते समय दाहिने हाथ से दहिना और बाएँ हाथ से बायाँ पैर छुओ।

"व्यतस्त पाणिना कार्यमुपसंग्रहणं गुरोः।
सव्येन सव्यः स्प्रष्टव्यो दक्षिणेन च दक्षिणः॥"

(३२८)

परदेश जाते समय, दूसरे ग्राम को जाते समय, विदेश अथवा अन्य गाँव से लौटकर आने के समय और किसी संस्कार विशेष के समय अपने पूज्यों के पैरों को छूकर आशीर्वाद प्राप्त करो।

(३२९)

दूसरे के पहिने हुए वस्त्र को पहिनना अनुचित है। बहुत से भाई नीलाम में वस्त्र वगैरः खरीद लेते हैं। और ऐसे वस्त्रों को जिन्हें विदेशी रमणिआँ पहिनती हैं उन्हें यहाँ के मनुष्य पहिनते हैं, यह बदतमीजी है।

(३३०)

जो उम्र में, पद में, प्रतिष्ठा में, बुद्धि में अथवा कार्य में अपने समान हो, और आपस में प्रणाम का व्यवहार चालू हो तो सदा

उसी के द्वारा पहिले प्रणाम की आशा न करो। बल्कि उसके पहिले आप उससे प्रणाम करने का ध्यान रखो।

(२३१)

अपना पूज्य अथवा वयोवृद्ध यदि कारण विशेष से आपका सम्मान करने के लिये प्रणाम करे तो इस बात का ध्यान रखो कि उन्हें आप से पहिले प्रणाम करने का मौका ही न मिले।

(२३२)

जो आपको माँगी हुई वस्तु दे देता है, उसे उसके माँगने पर किसी देय (देने योग्य) वस्तु के लिये आप इन्कार मत करो—जी मत चुराओ।

(२३३)

प्रणाम करने का भारतीय ढंग दोनों हाथ जोड़ने का है। अतएव जब किसी को प्रणाम करो तब उसके सामने दोनों हाथ जोड़ो। सिर को एक हाथ लगाकर प्रणाम करने का ढंग विदेशीय है—भारतीय नहीं।

(२३४)

यदि कोई मुख से कुछ वाक्य विशेष बोलकर प्रणाम करता है तो उसका उत्तर आप भी मुँह से ही दो। चुप्पी न साध जाओ।

(२३५)

बिना किसी कारण विशेष के दूर से ही चिल्लाकर प्रणाम न करो। यह प्रणाम नहीं बल्कि प्रणाम की लकीर पीटने के लिये बेगार टालना है।

(२३६)

जिस प्रकार अन्यान्य देशीय जातियों में प्रणाम के लिये

शब्द विशेष मुकर्रर है उस तरह भारत में और खासकर हिन्दू जाति में कोई प्रणाम का तरीका या वाक्य निश्चित नहीं है। ऐसी दशा में प्रणाम के लिये एक वाक्य विशेष को निश्चित कर देना सहज बात नहीं है। इसलिये प्रणाम करने के समय उत्तम अर्थ युक्त मधुर और ऐसे सुन्दर वाक्य का ही प्रयोग करो जिसमें नमन का अर्थ अवश्य हो। मेरे विचार से किसी महापुरुष विशेष के नाम के साथ "जय" शब्द बोल देने से प्रणाम सूचित नहीं होता।

(३३७)

इस्तंजा करते समय पजामे में हाथ डाले हुए घूमते फिरना ठीक नहीं है, बल्कि एकान्त में नीची दृष्टि किये इस्तंजा करना चाहिये।

(३३८)

पानी का पात्र लिये बिना पाखाने मत जाओ, थोड़ा पानी लेकर भी मत जाओ बल्कि आवश्यकता से कुछ अधिक पानी ले जाना चाहिये।

(३३९)

नदी के किनारे, ताल के किनारे, कुएँ के पास, मार्ग में या मार्ग के किनारे, फलवाले वृक्ष के नीचे, सूने घर में, पवित्र स्थान में और श्मशान में पाखाने मत जाओ।

(३४०)

बिना किसी आड़ के पास बैठकर पाखाने जाना बेशर्मी का खासा प्रमाण है।

(३४१)

जल के एक पात्र से पाखाना जाने के बाद कई मनुष्यों को गुदा प्रक्षालन नहीं करना चाहिये।

(३४२)

गुदा प्रक्षालन के लिये, पाखाना जाने के बाद धोती या पाजामा खोले हुए तथा हाथ में लिये हुए पानी के फिराक़ में घूमना ठीक नहीं है।

(३४३)

पाखाना जाने के बाद गुदा को मिट्टी लगाकर धोने की आज्ञा हिन्दू सभ्यता दे रही है। इसी प्रकार हिन्दू सभ्यता पेशाब करने के बाद लिंगेंद्रिय को जल से धोने के लिये कहती है। पाखाने के बाद गुदा और मूत्रेन्द्रिय को मिट्टी लगाने के लिये मनुजी ने लिखा है।

"एका लिंगे गुदे तिस्रः।"

(३४४)

पाखाने से आने के बाद उस पात्र को जिसमें कि गुदा प्रक्षालनार्थ पानी ले गये थे उसे और अपने हाथ पैरों को खूब पवित्र मिट्टी तथा शुद्ध जल से धो डालो।

(३४५)

शौचगृह में पाखाना जाने के समय शरीर पर वस्त्र न पहिने रहो। पाखाने के लिये एक फटी पुरानी धोती अलग रखनी चाहिये।

(३४६)

भारतीय पोशाकों में, कुरता या मिर्जई साफा या पगड़ी, डुपट्टा, धोती, खड़ाऊँ या जूतियाँ हैं। भारतीय सभ्यता इन्हीं वस्त्रों को पहिनने की आज्ञा देती है।

(३४७)

कान में फूल लगाना, छाती पर किसी वस्त्र में फूल लगाना, टोपी में फूल लगाना या सिर के बालों को पुष्पों से सुसज्जित करना पुरुष के लिये असभ्यता सूचक है।

(३४८)

रेशम वगैरः के खूबसूरत रूमाल को बहुत से भाई अपने जेब से बाहर जान बूझकर दिखाने के लिये लटका लेते हैं यह बात ठीक नहीं है।

(३४९)

कई बहिनें और माताएँ बहुत ही महीन वस्त्र पहिनती हैं, यह निर्लज्जता का सूचक है। घर के बाहर तो ऐसे वस्त्र कदापि नहीं पहिनने चाहिये।

(३५०)

बहिनों और माताओं को चाहिये कि अनाप सनाप जेवरों को अपने शरीर पर न लादें।

(३५१)

बहुतेरी बहिनें अपने शरीर को सूई वगैरः से गोदकर उसमें लाल या नीला रङ्ग भरकर खूबसूरती के लिये आमरण चिह्न कर लेती हैं यह ठीक नहीं है।

(३५२)

कानों में बहुत से छिद्र करके बालियाँ तथा और दूसरे आभूषण पहिनना बेहूदापन है।

(३५३)

काँच में मुँह अपने मुख पर के दोष निवारणार्थ ही देखना

चाहिये। व्यर्थ ही रातदिन काँच में मुँह देखा करना पागलपन है।

(३५४)

काँच में मुख देखकर बहुत से लोग बातचीत करने तथा आँख, कान, मुँह, नाक, होंठ वगैरः हिलाने लगते हैं, यह ठीक नहीं है।

(३५५)

अपने पति के भोजन करने के पहिले स्त्री को भोजन नहीं करना चाहिये।

"पतिं शुश्रूषते येन तेन स्वर्गमहीयते।"

(३५६)

सूर्यास्त के समय अथवा उसके बाद अपने घर के द्वार में या द्वार के बाहर स्त्रियों को कदापि बैठना या खड़े नहीं रहना चाहिये।

(३५७)

अपने घर के द्वार में बैठकर या खड़ी रहकर दूसरे घर में मौजूदा स्त्रियों से बातें करना, या घर के मुख्य द्वार पर जो गली में अथवा सड़क के किनारे हो, बैठना स्त्रियों के लिये अनुचित है।

(३५८)

स्त्रियों को उच्च स्वर से भाषण नहीं करना चाहिये। हमेशा मन्द स्वर से शांतिपूर्वक बोलने का स्वभाव डालना चाहिये।

(३५९)

स्त्री दूकानदार से पुरुष को सौदा नहीं खरीदना चाहिये। इससे लोग चालचलन पर सन्देह करने लगते हैं।

(३६०)

पुरुषों के साथ स्त्रियों को दुकान पर बैठाकर लेनदेन करना

और भाषण करना अपने पवित्र आचरण को लोगों की दृष्टि में गिराना है।

(३६१)

स्त्रियों को चाहिये कि परपुरुषों के साथ व्यर्थ ही अनावश्यक बातचीत न करें।

(३६२)

काँदे, लहसुन आदि दुर्गंधि पदार्थों का सेवन न करो। क्योंकि इनके खाने से मुँह में बदबू आने लगती है। साथ ही ये तमोगुण प्रधान होने के कारण निषिद्ध हैं। मनुस्मृति में लिखा है:—

"लशुनं गृंजनं चैव पलाण्डु कवकानि च।
अभक्ष्याणि द्विजातीनाममेध्यप्रभवाणि च॥"

(३६३)

माँस कभी नहीं खाना चाहिये क्योंकि यह मनुष्य भोजन नहीं है। परमात्मा ने माँसभोजी को माँस प्राप्त करने के लिये साधन दिये हैं जैसे, तेज़ नाखून और पैने दाँत। मनुष्य के नाखून और दाँत शाकभोजी होने का प्रमाण देते हैं। ऐसे अनेक प्रमाणों द्वारा सिद्ध है कि मनुष्य की खुराक माँस कदापि नहीं है।

(३६४)

जिसको नित्य प्रणाम करते हो, उससे कभी प्रणाम करना और कभी न करना यह बहुत ही अनुचित बात है।

(३६५)

किसी को देखकर प्रणाम करने के लिये हाथ उठाकर मुख आदि अंग खुजलाने न लगो।

(३६६)

जलाशय में उतरकर, जल में पेशाब नहीं करना चाहिये।

(३६७)

अपने मुँह अपनी तारीफ नहीं करनी चाहिये बल्कि काम ऐसे करने चाहियें जिनसे लोग खुद बखुद आपकी तारीफ करने लगें।

(३६८)

अहंकार मत करो। यह बड़ी बुरी आदत है। इससे आदमी बिलकुल बर्बाद हो जाता है। हाँ, अपने चित्त से आत्माभिमान मत खोओ।

(३६९)

जिस किसी से जितने दिन के लिये जिस शर्त पर कोई वस्तु ऋण लो उसे उतने ही दिन में शर्त के अनुसार जैसे बने तैसे लौटा दो।

(३७०)

हवन (यज्ञ) और चिता की अग्नि को मत छेड़ो और न इन्हें मुँह से फूंको।

(३७१)

"दीपक बुझ गया" ऐसा न कहो बल्कि "गुल हो गया, ठंडा हो गया, शान्त हो गया" वगैरः शब्द बोलो।

(३७२)

खाने की वस्तुओं को, पीने के जल को और अग्नि को मत लाँघो।

(३७३)

अपने घर आये हुए शत्रु का भी स्वागत तथा सत्कार करो। यही समय उदार और अनुदार हृदय के परिचय देने का है।

(३७४)

किसी की वस्तु को लेकर हज़म न कर जाओ।

(३७५)

किसी के ज़रा से उपकार—अहसान के बदले में 'धन्यवाद' 'साधुवाद' 'शुक्रिया अदा करता हूँ' वगैरः वगैरः वाक्य बोलो।

(३७६)

गधे, कुत्ते, गऊ, बैल, महिष, महिषी आदि पशुओं पर मत चढ़ो। मनु ने भी कहा है—

"गवाँ च यानं पृष्ठेन सर्वथैव विगर्हितम् ।"

(३७७)

बच्चों से मैत्री मत करो। कहावत भी है कि "नादान की दोस्ती जी का जंजाल"। स्मरण रहे कि मित्रता और प्रेम में भेद है।

(३७८)

औरतों से लड़ाई झगड़ा—वाद विवाद न करो और न उन पर हाथ उठाओ। उनकी इज्जत करो क्योंकि—

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ।"

(३७९)

दुष्ट पुरुषों, विधर्मियों तथा नीच लोगों की नौकरी न करो। धार्मिक विद्वानों, उदार हृदयवाले, सदाचारी और कुलीन पुरुषों की ही नौकरी करना चाहिये।

(३८०)

वेदादि उत्तम शास्त्रों का पढ़ना पढ़ाना, यज्ञ करना कराना, दान देना और लेना ये छः कर्म ब्राह्मण वर्ण की सभ्यता के आधार रूप हैं। यथा—

"अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा ।
दानं प्रतिगृहं चैव ब्राह्मणानामकल्पयत् ॥"

(३८१)

ब्राह्मणों को अपने से हीन वर्ण के घर रोटियाँ बनाकर खिलाना, पानी भरना, बोझा उठाना और खुशामद करना उचित नहीं है।

(३८२)

स्त्रियों को चाहिये कि अपने पति के सोने के बाद सोवें और उठने के पहिले उठें।

(३८३)

नींद में खर्राटे न भरो। यह आदत हटाई जा सकती है। खर्राटे के समय मनुष्य जिस करवट सो रहा हो, उसके विरुद्ध करवट बदलने से खर्राटा कम हो जाता है। सोते समय मुँह बन्द रखने से भी खर्राटा होना रुक जाता है।

(३८४)

एक ओढ़ने में कई मनुष्यों को घुसकर नहीं सोना चाहिये। यदि कहीं आपत्तिकाल में या कारण विशेष से ऐसा ही मौका आजावे तो ओढ़ने के वस्त्र के अन्दर अधोवायु (पाद) नहीं त्यागना चाहिये।

(३८५)

अपने पास सोनेवाले पर निद्रावस्था में अपनी टाँगें और हाथ न पटको।

(३८६)

समझदार बालकों को अपने पास लेकर पति पत्नी को नहीं सोना चाहिये। ऐसे समय आपस में हँसी दिल्लगी अथवा अन्य किसी प्रकार की कामचेष्टा भी नहीं करनी चाहिये।

(३८७)

कसरत, औषधि सेवन और मैथुन ये तीन काम लुकछुप ही करने चाहिये।

(३८८)

नग्न स्त्रियों को ताकना या उन्हें नग्न दशा में देखने की चेष्टा करना बड़ी भारी असभ्यता का सूचक है। कहा भी है:—

"नग्नां नेक्षेत च स्त्रियम्।"

(३८९)

दुःख में पड़े हुए अपने शत्रु को भी मत सताओ बल्कि जहाँ तक हो उसको सच्चे मन से कष्ट के समय में सहायता दो।

(३९०)

वृद्ध, अंगहीन, स्त्री, और कोढ़ आदि भयंकर रोगग्रस्त भिक्षुओं को अपने घर के द्वार पर भिक्षार्थी आया देख कर मत झिड़को बल्कि नम्र वचनों से उसके चित्त को प्रसन्नता देते हुए यथा सामर्थ्य सहायता दो।

(३९१)

गऊ और बैल को पैर से मत मारो और न जान बूझकर उनको पैर छुआओ।

(३९२)

मृतप्राय अथवा मृत शरीर का किसी प्रकार से अपमान मत करो।

(३९३)

भयंकर प्राणियों के मृत शरीर को किसी मनुष्य पर फेंककर मत चमकाओ।

(३९४)

पतिपत्नियों को रात्रि के समय बातचीत बहुत ही आहिश्ता आहिश्ता बोल कर करनी चाहिये ताकि कोई घर का मनुष्य अथवा पड़ोसी न सुन सके।

(३९५)

किसी दूसरे मनुष्य के आगे अपनी पत्नि से अथवा पति से प्रेमयुक्त भाषण अथवा हँसी मज़ाक न करो।

(३९६)

बाज़ारों, गलियों और चौराहों में अपने गले में फूलों की माला डालकर मत घूमो।

(३९७)

बहुत से लोगों की आदत होती है कि बात को सुनने और समझने के बाद भी "ऐं ?" "क्या ?" आदि प्रश्नार्थक वाक्य बोल देते हैं। यह आदत ठीक नहीं है।

(३९८)

हवन की अग्नि में, चिता की अग्नि में, भोजन के पदार्थों पर तथा ऐसे ही दूसरे पवित्र पदार्थों पर फूंक मत दो क्योंकि कभी कभी फूंक के साथ थूक भी गिर जाता है।

(३९९)

पूजा के द्रव्यों का सूँघना तथा उन्हें पहिले अपने काम में लाना अनुचित समझा जाता है।

(४००)

जल में कचरा, कूड़ा, विष और मल मूत्रादि फेंककर जला-

शय के निर्मल जल को गन्दा बनाकर प्राणियों का अहित सम्पादन न करो।

"नाप्सु मूत्रं पुरीषं वा ष्ठीवनं वा समुत्सृजेत्।
अमेध्यलिप्तमन्यद्वा लोहितं वा विषाणि वा ॥"

(४०१)

पशुओं को मत चमकाओ। और दूध पीते हुए बच्चे को बिना किसी कारण विशेष के उसकी माता से अलग न करो।

(४०२)

बहुत दिनों में मिलनेवाले अपने प्रेमी से हाथ मिलाना चाहिये। लोगों का ऐसा ख्याल है कि हाथ मिलाना पाश्चात्य सभ्यता है किन्तु यह भारत की प्राचीन सभ्यता है—इसका जिक्र महाभारत नामक ग्रंथ में है।

(४०३)

भारतीय सभ्यता एक साथ एक पात्र में दो मनुष्यों को भोजन करने की आज्ञा नहीं देती अर्थात् जूठ न खाना निषिद्ध है। जूठ न खाने से कई छूत की बीमारियाँ जो हों अथवा होने वाली हों एक दूसरे को सहज ही में लग जाना संभव है।

(४०४)

पीने से बचे हुए, पैर धोने से बचे हुए, तथा सन्ध्योपासना से बचे हुए जल को फिर काम में नहीं लाना चाहिये।

"पादशेषं पीतशेषं सन्ध्याशेषं च यज्जलम्।
तज्जलं सुरया तुल्यं ग्राह्यं नैव कदाचन ॥"

(४०५)

विद्वानों से द्वेष मत करो—क्योंकि वे पृथ्वी के देवता हैं। उन्हीं से जाति, समाज अथवा देश की शोभा है।

(४०६)

नीच संगति से बिलकुल दूर रहना चाहिये—क्योंकि संगति के अनुसार ही लोग आपको समझने लगेंगे। कलाली में जाकर या कलाल से मित्रता करके भले ही आप मदिरादि का स्पर्श भी न करें किन्तु लोगों का आप पर भ्रम हो जावेगा। इसलिये ऐसी संगति में जहाँ बैठने से लांछन लगता हो, वहाँ भूलकर भी पैर मत रखो। धर्मशास्त्र भी इन्कार करता है।

"न संवसेच्च पतितैर्न चाण्डालैर्न पुल्कसैः।
न मूर्खैर्नावलिप्तैश्च, नान्त्यैर्नान्त्यावसायिभिः॥"

(४०७)

यदि आप पुरुष हैं तो बालिकाओं और युवतियों को पढ़ाने का काम अपने हाथ में न लो।

(४०८)

बाजार या गली में जहाँ स्थान कम हो और भीड़ खूब हो, वहाँ कारणवश भी उस समय न ठहरो। ठहर जाने से लोगों के आने जाने का काम रुक जावेगा और आपको भी तकलीफ का सामना करना पड़ेगा।

(४०९)

यदि किसी के यहाँ किसी तरह का उत्सव हो वहाँ बिना बुलाये कदापि न जाओ। यदि उस दिन या उस समय कोई आवश्यकीय कार्य हो तो भी टाल दो।

(४१०)

किसी के दुःख में, मृत्यु के समय बिना बुलाये ही चले जाओ—बुलाने का मार्ग मत देखो। शत्रुता त्याग कर अपने शत्रु के दुःख में शामिल हो जाओ।

(४११)

बाजार में मिठाई तथा चटपटी चीज़ों के दोने मत चाटो।

(४१२)

बाजार या गलियों में लोगों के सामने, खड़े होकर बैठकर या चलते हुए कोई चीज मत खाओ। बहुत से मनुष्य लोगों के सामने कुछ न कुछ चरते रहना अपनी प्रतिष्ठा समझते हैं किन्तु यह भूल है। रातदिन खाना पशुओं का काम है।

(४१३)

अपने दोनों हाथों से अपने सिर को मत खुजलाओ। नीति शास्त्र भी इन्कार करती है:—

"न संहताभ्यां पाणिभ्यां कण्डूयेदात्मनः शिरः।"

(४१४)

बिना किसी महान् दुःख के लम्बी आहें मत लो। जँभाई या डकार के बाद "हाय हाय" शब्द अनायास ही निकल जाता है। यह बहुत बुरी बात है—इसे भुलाने का प्रयत्न करो।

(४१५)

लिखते समय, यदि दूसरे के पढ़ने के लिये लिखते हो तो उसकी सुविधाओं का ध्यान रखो। अक्षर साफ साफ लिखो ताकि उसे पढ़ने में कठिनता न हो। बहुत ही शीघ्रता से बुरे बुरे अक्षर लिखना प्रायः लोग अपनी पंडिताई समझते हैं किन्तु यह भूल है। अक्षर साफ सुथरे और सुवाच्य होने चाहिये।

(४१६)

रंडी वगैरः स्त्रियों के नाच में मत जाओ। यदि कहीं मार्ग में वेश्या समाज इकट्ठा हो रहा हो तो वहाँ खड़े मत रह जाओ।

बल्कि ऐसे जल्सों और उत्सवों में भी मत जाओ जहाँ रंडी का नाचगान होनेवाला हो।

(४१७)

पहिले से ही ऐसी जगह पर बैठो जहाँ से कोई उठा न सके।

(४१८)

सभा, समाज में, अपनी इज्जत, पद और उम्र के अनुसार पहिले से ही अपना स्थान देखकर बैठो।

(४१९)

मन्दिर, मस्जिद वगैरः धार्मिक स्थानों में यदि कोई बड़ा आफीसर (हाकिम) आ जावे तो उसका स्वागत करने के लिये मत उठो। यदि उचित समझो तो प्रणाम कर लो। क्योंकि वहाँ मातहत हाकिम और जनता सभी एक समान हैं।

(४२०)

किसी उत्सव, समाज या सभा में पहुँचकर वहाँ के उपस्थित महाशयों को प्रणाम अवश्य करो।

(४२१)

यदि कहीं कुछ लिखा हो तो पहिले पढ़ लो और यदि उस की कोई बात आप पर लागू हो तो उसका पालन करो, अन्यथा आगे मत पढ़ो।

(४२२)

अपनी भार्या को मत मारो, आप आरंभ से ही उसके साथ ऐसा बर्ताव करो जिससे यह नौबत ही न आवे। क्योंकि—

"सन्तुष्टो भार्यया भर्त्ता भर्त्ता भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वैध्रुवम्॥"

(४२३)

जहाँ मनुष्य दूसरे का अपराध देखता है, वहाँ थोड़ा बहुत खुद का भी होता है। इसलिये अपने उस अपराध के लिये खुद को दण्ड दो और उस दोष को हटा दो, दूसरा मनुष्य आप ही आप सुधर जावेगा।

(४२४)

किसी वाचनालय (लायब्रेरी) में जाकर बातचीत न करो और न जोर जोर से बोलकर ही पढ़ो।

(४२५)

लायब्रेरी में जाकर जिस अखबार या पुस्तक को आप देखना चाहते थे और यदि उसे उस समय कोई देख रहा हो—पढ़ रहा हो, तो उसके हाथ में से न छीनो।

(४२६)

किसी अजायबघर, म्यूजियम अथवा कल-कारखाने के लिये पहिले उसको देखने के नियमों को जान लो, तत्पश्चात् उसमें प्रवेश करो।

(४२७)

प्रत्येक देश की सभ्यता में थोड़ा बहुत भेद अवश्य है, इसलिये विदेशीय आदमियों के साथ बहुत ही सावधानी से सँभल कर बर्ताव करो। ऐसा न हो कहीं आप उनकी दृष्टि में असभ्य ठहर जावें।

(४२८)

लोगों को भोजनार्थ अपने यहाँ बुलाकर उन्हें भोजन करने के लिये जमीन पर धूल में मत बिठाओ, अच्छे आसनों पर आदर

पूर्वक बिठाओ। भोजन के स्थान को खुशबूदार वस्तुओं द्वारा सुगन्धमय कर दो।

(४२९)

हिन्दुओं को प्राय: रन्धनागार (जहाँ रसोई बनती है वह स्थान) में जाकर ही चौके में भोजन करना पड़ता है क्योंकि सखरी निखरी का ख्याल होता है। जबकि भोजन कर रहे हों और इत्तिफाक से रसोई बनानेवाला भोजन बना चुका हो तो उसे चाहिये कि चूल्हे में की जलती हुई लकड़ियों को निकालकर पानी डालकर उसी समय न बुझावे क्योंकि रसोई जीमनेवाले के आँख, नाक में धूआँ घुस जाता है, जिससे उसे बड़ा कष्ट होता है।

(४३०)

किसी की मिहनत का बदला दिये बिना न रहो। यदि वह उस समय उसके बदले में लेने से इन्कार करे तो फिर कभी किसी दूसरे बहाने से उसकी मिहनत का मेहनताना चुका दो।

(४३१)

भोजन को पट्टे पर या चौकी पर रख के खाओ। कई लोग स्वयम् चौकी या पट्टे पर चढ़ बैठते हैं और भोजनपात्र पृथ्वी पर रखकर भोजन करते हैं, यह अनुचित है।

(४३२)

थाली में दाल, कढ़ी, या ऐसी ही दूसरे पतले पदार्थ होने पर लोग उसे सारे पात्र में न फैलने देने के लिये अपने पैर के अँगूठे के सहारे उस भोजनपात्र को रख लेते हैं, यह बहुत ही बेहूदापन है। भोजन को पैर नहीं छुआना चाहिये।

(४३३)

भोजन करने के पहले हाथ पाँव और मुँह को अच्छी तरह जल से साफ कर डालो और कुल्ली भी करो।

(४३४)

मुख, हाथ या पैर धोकर अपने कुरते या धोती में मत पोंछो बल्कि इस काम के लिये एक कपड़े का टुकड़ा अलग ही रखो।

(४३५)

किसी के गले में पड़ी हुई जनेऊ को मत छुओ और न खींचो।

(४३६)

भारतीय आर्य सभ्यता प्रत्येक ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य को जनेऊ पहिनने के लिये बड़े जोर के साथ आज्ञा देती है, अतएव उक्त तीनों वर्णों को यज्ञोपवीत अवश्य ही पहनना चाहिये।

(४३७)

मल मूत्र त्यागने के समय यज्ञोपवीत कान पर लपेट लेना चाहिये और फिर बिना हाथ शुद्ध किये उसे नहीं छूना चाहिये।

(४३८)

पाखाने से आने के बाद जब तक मिट्टी लगाकर हाथ साफ़ न कर लो तबतक किसी भी वस्तु को न छुओ।

(४३९)

अपने मैले हाथों को किसी दूसरे के वस्त्रों से चुपचाप पोंछने का विचार मत करो।

(४४०)

इधर की उधर कहने की आदत मत डालो। ऐसे आदमी कुछ दिनों बाद दोनों ओर के नहीं रहने पाते।

(४४१)

बालकों को चाहिये कि अपने घर की वस्तुओं को भी न चुरावें, वर्ना बड़े होने पर अव्वल नंबर के असभ्य बन जाओगे। जो आदत बचपन में पड़ जाती है वह बड़े होने पर बड़ी कठिनाई से जाती है। पैसे चुराकर यदि मिठाई खाने की आदत पड़ गई तो उम्र भर चटोरापन नहीं जावेगा। दैवेच्छा से यदि बड़े होने पर तुम्हारी आमदनी कम हुई तो मिठाई खाने आदि की आदत के लिये तुम निस्सन्देह चोरी करोगे, जुआ खेलोगे अथवा ऐसे ही बहुतेरे पाप कर्म करोगे—इनसे तुम असभ्यों में गिने जाओगे। इसलिये बचपन से ही किसी तरह की खराब आदत मत डालो।

(४४२)

विद्यार्थियो ! पाठशाला में सिवाय पढ़ने लिखने के बातचीत, खेलकूद, झगड़ा आदि दूसरा काम मत करो। यह ध्यान रखो कि विद्याभ्यास के समय विद्याभ्यास करो और खेलने के वक्त खेलो।

(४४३)

अपने अध्यापक को अत्यन्त पूज्य दृष्टि से मानो, क्योंकि ज्ञानदाता आपके लिये वही हुआ है, अतएव उसकी इज्जत करो। हिन्दू धर्मशास्त्र कहते हैं—

> "एकाक्षर प्रदातारं योगुरुनैवमन्यते ।
> श्वान योनिशतं गत्वा चाण्डालोसोपि जायते ॥"

(४४४)

विद्यार्थियों को चाहिये कि अपने सहपाठियों से लड़ाई न

करें बल्कि प्रेम के साथ रहें। सब के साथ भाई बहन का सा व्यवहार करें—

"हिलि मिलि के निज गृह बसें, पंछिहु निपट अजान।
कछु लज्जा है वा नाहीं, बालक चतुर सुजान॥"

(४४५)

लड़को! अपने देश की सभ्यता तुम्हें लड़कियों के साथ खेलने के लिये मना करती है, इसलिये लड़कियों में मत खेलो।

(४४६)

लड़को! बचपन से अधिकतर औरतों में उठने बैठने की आदत मत डालो। नहीं तो यह सत्य समझ लो कि आगे चलकर तुम्हारे चाल चलन और रहन सहन में थोड़ा बहुत जनानापन तो जरूर ही आजावेगा।

(४४७)

लड़को! विद्वान् पुरुषों की संगति में ही अपना समय बिताओ। विद्याव्यसनी पुरुषों के पास ही बैठो, उनकी बातें ध्यान से सुनो और तदनुसार आचरण करो। संभवतः इस समय मूर्ख समाज तुम्हें वहाँ से हटाने की अनेक प्रकार से कोशिशें करेगा किन्तु तुम अपने सुमार्ग पर निर्भयता पूर्वक खड़े रहो।

(४४८)

लड़को तथा नवयुवको! गँजेड़ी, भँगेड़ी मदकची, अफीमची, शराबी, तम्बाकू सेवन करनेवाले और चाय वगैरः पीनेवाले व्यक्तियों को हरगिज़ सभ्य मत समझो—उनका साथ भूलकर भी मत करो।

(४४९)

तम्बाकू वगैरः जीवन को नष्ट करनेवाले मादक द्रव्यों को स्वाद चखने तथा अनुभव प्राप्त करने के लिये भी मत ग्रहण करो। इस बात को सोलहों आने सच समझो कि तमाकू, चाय, भंग आदि मादक पदार्थों का सेवन बहुत ही बुरा है। सभ्यों के ग्रहण करने की वस्तु नहीं है। इनके लिये आयुर्वेद निषेध करता है, धर्मशास्त्र रोक रहा है और खाने पीनेवाले लोग भी बुरा कहते हैं; इसलिये इन वस्तुओं को मत छुओ, ये विष से भी बुरी हैं। तम्बाकू से जहरीला साँप मर जाता है, चाय से खरगोश मर जाता है अतएव इन असभ्यता की जड़ मादक चीजों का सेवन कदापि न करो। जिस देश में नशेबाजी अधिक है वह देश सभ्य नहीं माना जा सकता।

(४५०)

चोरी, व्यभिचार और जुआ आदि निंद्य कार्य भी देश की सभ्यता को कलंकित करनेवाले हैं, अतएव इन्हें रोकने का प्रयत्न करो।

(४५१)

सूर्योदय के बाद तक मत सोते रहो। हमारे पूर्वजों ने सूर्योदय के बाद सोने वालों के लिये, देखिये कैसा अच्छा दण्ड-विधान किया है। मनुजी कहते हैं कि—

"तं चेदभ्युदियात्सूर्यः शयानं काम चारतः।
निम्लोचेद्वाप्य विज्ञानाज्जपन्नुपवसेद्दिनम् ॥"

(४५२)

यदि इच्छापूर्वक सोते हुए सूर्य उदय हो जावे तो गायित्री को जपता हुआ दिन भर व्रत करे।

(४५३)

गर्मी के मौसिम में लोग अपने अपने आँगनों में, घर के बाहर चबूतरों पर, बाजार या गलियों के चबूतरों पर सोते हैं किन्तु उन्हें लोगों के जगाने के पूर्व ही उठकर बैठ जाना चाहिये क्योंकि नींद मनुष्य की अचेत दशा है, ऐसी दशा में कइयों की धोतियाँ खुल जातीं हैं, कइयों के गुप्त अंग खुल जाते हैं, गर्मी होने के कारण वस्त्र न ओढ़कर उघाड़े ही सोते हैं। यह असभ्यता है। या तो बाहर न सोवें और सोवें तो फिर अँधेरे ही अँधेरे शय्या से उठ खड़े हों।

(४५४)

सब से अच्छी बात तो यह है कि लोग गलियों और बाजारों के चबूरतों तथा दूकानों के आगे खुले बरामदों में सोवें ही नहीं। क्योंकि बाजारू कुत्ते या तो उनके बिछौनों में सोते हैं या उन पर मल और मूत्र त्याग जाते हैं।

(४५५)

किसी अनुचित कार्य के किसी सभ्य व्यक्ति द्वारा मना किये जाने पर उसे मत करो। कई लोग इन्कार करने पर उस कार्य को दूना करते हैं, यह नीच पुरुषों का काम है।

(४५६)

किसी की आवाज को सुनकर, निद्रा में चौंककर या हड़-बड़ाकर चिल्ला उठना, भागने लगना या उन्मत्त की भाँति इधर उधर भागने लगना ठीक नहीं है।

(४५७)

नींद से उठते ही कई लोग अपने सारे शरीर को कभी कहीं से और कभी कहीं से खुजाने लगते हैं; यह वानरी क्रिया अनुचित है।

(४५८)

यदि कहीं खुजली मालूम हो तो जल्दी जल्दी घरड़ घरड़ खुजलाना ठीक नहीं, बल्कि धीरे धीरे और चुपचाप खुजलाओ।

(४५९)

व्याख्यान देते समय, सभा में, चलते फिरते हुए लोगों में रानें मत खुजलाओ; नहीं तो लोग हँसी करेंगे।

(४६०)

अपने घर के लोगों के नाम यहाँ तक कि पशुओं के नाम भी प्यारे, मधुर और गुणयुक्त रखो। बुरे नाम बदले भी जा सकते हैं। नामों पर से भी कुल, जाति, प्रान्त और देश की सभ्यता का अनुमान लगाया जाता है। इसलिये अर्थयुक्त, गुण-सूचक और बोलने में प्यारे नाम ही रखना चाहिये। हिन्दू जाति में नाम सीमाबद्ध से हो गये हैं। एक नाम कई मनुष्यों के होते हैं यहाँ तक कि पूरा, भूरा, धूरा, तन्ना, पन्ना धन्ना, मुन्ना, छज्जू, छीतर, डाल्लू, भँवरा, कजोड़ा, गुलाब, मोती, मिसरी आदि सैकड़ों निकम्मे नाम हज़ारों लोगों के हैं। यदि वे कुछ भी समझदार हैं तो अपना नाम सभ्य समाज में कहते शरमाते हैं।

(४६१)

अपने घर आये भिक्षुओं को यदि कुछ नहीं देना है तो उन्हें झिड़को मत, बल्कि समझाकर प्रेमपूर्वक हटा दो।

(४६२)

किसी की वस्तु को छिपाकर उसके बदले में मिठाई वगैरः खाने की या पैसे लेने की चेष्टा करना अनुचित है।

(४६३)

किसी के अतिथि सत्कार के समय निम्न बातों का ध्यान रखो। भारत की यह बहुत पुरानी सभ्यता है। लोगों ने इसे भुला दिया है और केवल देव प्रतिमाओं के पूजन में लगा दी है—

आवाहन—आगन्तुक महाशय को आइये, पधारिये आदि कह कर स्वागत करना।

आसन—बाद में बैठने के लिये उत्तम आसन देना। पश्चात्

पाद्य अर्घ्य—पैर धोने के लिये उत्तम जल देना तथा खुद अपने हाथों धोना।

आचमन—बाद में कुछ पेय पदार्थ दुग्ध जलादि देना।

स्नान—स्नान करवाना।

वस्त्र—धोती वगैरः वस्त्र बाँधने को देना।

यज्ञोपवीत—बाद में नवीन जनेऊ पहिनने के लिये देना।

चंदन—सुगन्धित द्रव्य चंदनादि लेपन करना।

अक्षत—खूबसूरती के लिये गन्ध में चावल वगैरः चिपकाना।

पुष्प—फूल मालाएँ पहनाना।

धूप—अतिथि की प्रसन्नता सम्पादन के लिये सुगन्धित द्रव्य जलाना।

दीप—यदि संध्या समय है तो दीपक जलाना क्योंकि

नैवेद्य—भोजन कराना है।

तांबूल—पान का बीड़ा देना।

यह षोडशोपचार नाम से प्रसिद्ध विधि भारत के आतिथ्य की अत्यन्त प्राचीन प्रथा है।

(४६४)

ऋषि, मुनि और संन्यासी महात्माओं के चरणों को जल से धोकर उस जल को अपने मस्तक से लगाना और अपने सारे घर में छिड़कना, उनकी प्रदक्षिणा करके आरती करना और परोपकार में खर्च करने के लिये द्रव्यादि उनकी भेट करना, यह अत्यन्त पूजनीय महापुरुषों के स्वागत का प्राचीन भारतीय विधान है।

(४६५)

अपने सम्बन्धियों को और मान्य पुरुषों को जब कि वे आप के घर से जावें तो उन्हें कुछ दूर तक नगर के बाहर पहुँचाने जाना चाहिये और आवें तब आगे जाकर सम्मानपूर्वक अपने घर तक ले आना चाहिये ताकि उन्हें किसी प्रकार का कष्ट न होने पावे।

(४६६)

जिससे एक बार मित्रता कर ली हो, उससे फिर यथासंभव वैर मत करो। यदि किसी कारणवश मनोमालिन्य हो भी जावे तो मन में ही रखो और दूसरे लोगों पर प्रकट मत होने दो।

(४६७)

किसी न किसी सभा, समिति, समाज, अथवा संस्था के सभासद अवश्य ही बन जाओ।

(४६८)

ऐसे वाक्य अथवा शब्द जिनका अर्थ उत्तम हो किन्तु वे अशुभ समय ही बोले जाते हों उनका शुभ समय में उच्चारण नहीं करना चाहिये। जैसे "राम नाम सत्य है" यह वाक्य अच्छा है किन्तु प्रायः इसे मुर्दे को ले जाने के समय ही बोलते हैं, अतएव अशुभ माना जाता है।

(४६९)

गरीबी असभ्यता नहीं है बल्कि आचार और व्यवहार आदि का ख़राब होना असभ्यता है, अतएव जहाँ तक हो सके सदाचारी बनने का निरन्तर प्रयत्न करो। फिर आप थोड़े ही दिनों में अपने को महान् सभ्य पावेंगे।

(४७०)

रुपये, पैसे यदि आपके जेब में या हाथ में हों तो उन्हें बताने की इच्छा से मत बजाओ। यदि वे स्वयं चलने हिलने के कारण बजते हों तो उन्हें मत बजने दो। क्योंकि उनके बजने से, जिसके पास हैं, उसका ओछापन झलकता है।

(४७१)

जब किसी को प्रणाम करो तो इस बात का ध्यान रखो कि हाथ में कोई भद्दी वस्तु न हो, जैसे बुहारी (झाड़ू)।

(४७२)

अपना घर हमेशा साफ़ रखो। वस्तुओं को यथास्थान व्यवस्थित रखना ही साफ सुथरापन है।

(४७३)

पढ़े लिखे मनुष्य ही सभ्य होते हैं, यह बात निश्चयपूर्वक नहीं कही जा सकती। विद्या का गुण सभ्यता अवश्य है किन्तु विद्या और सभ्यता में अन्तर है। क्योंकि कभी कभी पढ़े लिखे विद्वान् अत्यन्त असभ्य और अपढ़ अतिशय सभ्य देखे जाते हैं।

(४७४)

खेलते समय या हर्ष के समय चीत्कार करना, कोलाहल मचाना या जोर जोर से शब्द करना ठीक नहीं है।

(४७५)

नाई के घर जाकर बाल बनवाना ठीक नहीं है। आजकल शहरों में नाइयों ने भी दूकानें खोल रखी हैं। उन "हेअर कटिंग सेलून" आदि नामधारी दूकानों में जाकर बाल बनवाना ठीक नहीं समझा जाता।

(४७६)

आप यदि किसी प्रतिमा, चित्र या धर्म ग्रन्थादि के माननेवाले नहीं हैं तो उसका अपमान भी न करें। जब कि आप उसे कुछ भी नहीं समझते तो अपमान किस का ? यदि अपमान किया तो यह सिद्ध हो जावेगा कि आप उसे कुछ न कुछ अवश्य मानते हैं—ऐसे व्यक्ति समाज में उद्दण्ड और उच्छृंखल कहे जाते हैं।

(४७७)

भारतीय आर्य-सभ्यता सिखाने के लिये हमारे देश में पहिले से ही सोलह संस्कार प्रचलित हैं। इन्हें सभ्यता की सोलह चाबियाँ कह सकते हैं। जब से देश में इन का अभाव हुआ तभी से भारत असभ्यता के गहरे गर्त में गिर गया। अतएव जिन्हें अपनी गँवाई हुई प्राचीन सभ्यता प्राप्त करना है, उन्हें संस्कारों से प्रेम करना चाहिये। अभी तक जिन संस्कारों का समय गुज़र चुका, उन्हें जाने दो; किन्तु अब जो हो सकते हों तो अवश्य ही करो।

(४७८)

किसी के बगल में, कोख में या अन्य अंग के भागों में गुदगुदाना, और खासकर अन्य लोगों के सामने, ठीक नहीं है।

(४७९)

जिससे पहिले बातचीत कर रहे हो, उससे पूरी तरह बात-चीत न करके बीच में दूसरे से बातें करने लगना और फिर उस से बहुत देर तक न बोलना अनुचित है।

(४८०)

अपने घर आये हुए व्यक्ति से जरूर बोलो, यदि बोलने के लिये कोई बात न हो तो कुशल समाचार तथा उसके आने का कारण ही पूछो। कहीं ऐसा न हो कि आप उससे बोलें ही नहीं और वह बुरा मानकर चला जाय।

(४८१)

यदि कोई अपने घर आया हो तो, आपको उसके पास उप-स्थित रहना चाहिये। यदि आपको उसी समय कोई आवश्य-कीय कार्य हो तो उसके लिये आगन्तुक महाशय से आज्ञा प्राप्त करो।

(४८२)

क्षत्रिय वर्ण की सभ्यता प्रजा की रक्षा करने में, दान देने में यज्ञ करने में, पढ़ने और विषयवासना से दूर रहने में हमारे पूर्वजों ने मानी है। यथा:—

"प्रजानां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च।
विषयेष्व प्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासतः॥"

(४८३)

बाजार में पड़ी हुई रद्दी और लावारिस वस्तुओं को जैसे तुलसी, बिरंजी, काग़ज, कोड़ी, फटा पुराना डब्बा आदि चीजों को बटोरते फिरना ठीक नहीं है।

(४८४)

जूतों के सिवाय चमड़े की बनी हुई चीज़ों को अपने शरीर पर धारण करना हिन्दुओं के लिये असभ्यता का चिन्ह समझा जाता है। क्षत्रिय वर्ण तलवार की म्यान, पड़तला वगैरः चमड़े को काम में लावें तो कोई हर्ज नहीं किन्तु व्यर्थ ही गेटिस, गेलिस, बेल्ट, चेन, और टोपी वगैरः में चमड़े को काम में लाना अनुचित है।

(४८५)

अंग्रेजी सभ्यता टोपी उतार कर इज्जत करना सिखाती है किन्तु भारतीय सभ्यता पैरों से जूतियाँ निकाल कर सम्मान करने की आज्ञा देती है। अतएव आदर देने के समय यदि उचित समझो तो जूते निकाल दो। जैसे—पवित्र स्थान में, पवित्र कार्य में, महात्मा पुरुषों के संग और पूज्य पुरुषों को प्रणाम करने के समय।

(४८६)

किसी को कुछ देकर अपना असहान मत जनाओ और न उसका बदला पाने की आशा ही करो। किसी के साथ सुव्यवहार करके उसे कहते फिरना स्वभाव का ओछापन प्रकट करता है। सभी शास्त्रों में देने के बाद उसे कहने पर उसका फल कम हो जाने का विधान है।

(४८७)

साधारण बातचीत में रुखाई, कठोरता, तानेबाजी, उद्दण्डता और शीघ्रता न होनी चाहिये। बातचीत करते समय खूब चिल्ला चिल्लाकर बोलना ठीक नहीं है।

(४८८)

यदि कोई आपको चिढ़ाने या कुढ़ाने का कुछ इशारा अथवा वाक्य उच्चारण करे तो आप उस तरफ ध्यान ही न दें। यदि आपने कुछ कहा सुना तो बात व्यर्थ ही बढ़ जावेगी। इसलिये उधर ध्यान देना ही ठीक नहीं। क्योंकि—

"अगनि पड़ी तृण रहित थल, आपुहिं ते बुझि जाय।"

(४८९)

सूने मन्दिरों की प्रतिमाओं पर, कबरों पर तथा धार्मिक चिह्नों पर थूकना, पेशाब करना या अन्य किसी प्रकार से अपमान करना बिलकुल बेहूदापन है।

(४९०)

सड़कों पर अथवा बागीचों में लगे हुए वृक्षों को बेत आदि से चंचलता के कारण अथवा दातून आदि के लिये तोड़कर शोभा को बरबाद मत करो।

(४९१)

बगीचे के पत्र, पुष्प को बिना उसके मालिक की आज्ञा के मत तोड़ो।

(४९२)

अपने जूठे पात्र, पत्तल, दोने, फलों के छिलके और गुठली वगैरः जहाँ तक बने वहाँ तक अपने पूज्य, वयोवृद्ध और वर्ण में तथा विद्या में उच्च मनुष्य से उठवाने का विचार मत करो। जब तक कि कोई खास प्रबन्ध न किया गया हो तब तक अपना जूठा अपने हाथों ही फेंको और पात्रों को स्वयं माँजें।

(४९३)

आपके घर आकर भोजन करनेवाले महाशय को उसके जूठें पात्र मत उठाने दो। या तो आप खुद उठाओ अन्यथा दूसरा प्रबन्ध करो।

(४९४)

जूते पर जूता रखा जाना अनुचित समझा जाता है, इसलिये जब कभी ऐसा हो जावे तो उन्हें अलग अलग कर दो। यह नियम नये जूतों के लिये नहीं है।

(४९५)

द्वार के छिद्रों में से अकारण ही आँखें लगाकर किसी अन्य महाशय के घर में अन्दर की ओर देखना अनुचित है।

(४९६)

पशुओं की रक्षा, दान देना, यज्ञ करना, पढ़ना, व्यापार, व्याज और खेती, इतने कार्य करना वैश्य की सभ्यता है। यथा—

"पशूनां रक्षणं दान मिज्याध्ययनमेव च।
वणिक्पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च॥"

(४९७)

मकान की सफाई और सजावट उसमें रहनेवाले मनुष्य के मन का सच्चा प्रतिबिम्ब है। चतुर मनुष्य मकान को देखकर ही उसमें रहनेवाले के स्वभाव का अनुमान कर लेते हैं। मान लो कि घर मैला और जहाँ तहाँ बिखरी हुई चीजों से भरा है तो समझा जायगा कि इसमें रहनेवाला मनुष्य गन्दा और आलसी है। यदि औरतों के चित्र बहुत हों तो विलासी है, इत्यादि।

(४९८)

यदि किसी को बुलाना हो तो सम्मान-सूचक शब्दों से उसके नाम को उच्चारण करो। दो या तीन बार से अधिक पुकारते ही न रहो।

(४९९)

छड़ी, बेंत, लड़की आदि को हाथ में लेकर व्यर्थ ही हिलाते हुए या घुमाते हुए मत चलो। इससे चित्त का चांचल्य-भाव प्रकट होता है। उस छड़ी से मार्ग में के कुत्तों और पशुओं पर प्रहार मत करो।

(५००)

किसी दूसरे की पुस्तक को यदि माँगकर पढ़ने के लिये लाये हो तो उस पर अपना नाम या और कुछ यहाँ तक कि पुस्तक के मालिक का नाम भी अपने हाथ से उसकी आज्ञा के बिना मत लिखो। स्मरण रखो कि वह मैली न हो जावे, पृष्ठों के कौने न मुड़ने पावें, कोई अनजान बालक किसी पृष्ठ को या चित्र को न फाड़ डाले। यदि आपको इन बातों की परवाह नहीं है तो आप दूसरे लोगों से पुस्तकें मत माँगिये—नहीं तो वे इन्कार कर देंगे। या आपको कुछ खरी खोटी कह देंगे तो आपको बुरा लगेगा।

(५०१)

माँगी हुई पुस्तक के खोजाने पर या खराब हो जाने पर उसके मालिक को उसके बदले में नई पुस्तक मँगा कर दो। क्योंकि उसने आपको पढ़ने के लिये दी थी न कि खोने या खराब करने के लिये।

(५०२)

पुस्तक यदि पढ़ने के लिये माँगकर लाये हो तो उसे शीघ्र ही लौटा दो। देनेवाले के माँगने की राह मत देखो। यदि पढ़ने के लिये फुरसत नहीं है तो पुस्तकों को व्यर्थ ही ला लाकर अपने घर में ढेर मत करो। अवकाश न हो तो बिना पढ़े ही लौटा दो, फिर जब कभी फुरसत हो तब माँग लाना।

(५०३)

सड़क के किनारों के फर्लांगों के पत्थरों, मीलों के पत्थरों तथा अन्य ऐसी ही सूचना के लिये बने हुए चिह्नों को खराब मत करो क्योंकि ये सब कुछ मनुष्य-समाज के हित के लिये ही हैं।

(५०४)

जो मज़ाक़ या दिल्लगी वैयक्तिक होती है, वही मज़ाक़ या दिल्लगी होती है। किन्तु यदि मज़ाक़ सामुदायिक रूप में किया जावे तो वह अपराध मान लिया जाता है। जैसे डाकघर तथा ऐसे ही अन्य सर्कारी दफ्तरों के द्वार पर "अन्दर मत आओ" लिखा होता है, यदि चाहो तो "अन्दर मूत आओ" दिल्लगी के लिये किया जा सकता है किन्तु यह अपराध हो जावेगा। इसी तरह रेल के डब्बों में उसकी लम्बाई चौड़ाई के अनुसार बैठनेवालों की संख्या लिखी होती है। जैसे "To seat 25 Passengers" इस वाक्य में से Seat शब्द का यदि S अक्षर काट दिया जावे तो "To eat 25 Passengers" हो जाता है। यद्यपि यह मज़ाक़ है तथापि अपराध ही है। यदि ऐसा करनेवाला पकड़ा जावे तो वह सज़ा पाता है। अतएव सामूहिक मज़ाक़ कभी नहीं करना चाहिये।

(५०५)

किसी के साथ साथ चलते समय दूसरे के चलने की सुविधा का ध्यान रखो। कंधे से कंधा अड़ा कर चलना तथा अपनी चाल को उसकी तरफ़ दबा कर उसको एक तरफ घुसेड़ देना या रास्ते से हटा देना अनुचित है। यह एक आदत सी पड़ जाती है। अतएव इस आदत को छोड़ दो।

(५०६)

पाखाने जाने के बाद विपुल जल से ही गुदा को अच्छी तरह मिट्टी वगैर: लगा कर धोना चाहिये। मिट्टी, पत्थर, लकड़ी, काग़ज़ वगैर: से पोछना बिलकुल अनुचित है।

(५०७)

बहुत से लोग ऊपर का वस्त्र जो लोगों को दिखाई पड़ता है, बड़ा ही साफ पहिनते हैं और अन्दर का वस्त्र जो शरीर से लगा हुआ रहता है वह इतना मैला, गन्दा और बदबूदार होता है कि उसे देखने से ही नफ़रत पैदा होती है। अतएव बदन पर के सभी वस्त्र साफ और सुथरे रखो। दिखावे की जरूरत नहीं है। ऐसे वस्त्र पहननेवालों को लोग अपवित्र—कपटी दिल का आदमी मानते हैं।

(५०८)

कई लोगों की आदत होती है कि वे अपने शरीर पर बैठी हुई तथा आसपास उड़ती मक्खी को एक ही झपाटे में पकड़ लेते हैं और मार डालते हैं; यह निर्दयता और घृणा-सूचक कार्य है।

(५०९)

हम कानों से अच्छी बातें सुनें, आँखों से शुभ पदार्थों को ही देखें और अंग उपांगों द्वारा सदा शुभ कार्यों को करते रहें। सारांश यह कि सदा हमारे शरीर का रोम २ सदा कल्याण पथ का अनुगामी हो। यह हमारी प्राचीन सभ्यता की पराकाष्ठा है।

(५१०)

हमारा देश एक ऐसा देश है जो अपनी सभ्यता द्वारा ही अपनी उन्नति कर सकेगा। अन्य देशों के अनुकरण करनेसे हम सभ्य बनने के बजाय असभ्य बन जावेंगे। यूरोप की कई सभ्यतायें नष्ट हो गईं और हो जावेंगी। अतएव ऐसी सभ्यता का हमें कदापि अनुकरण न करना चाहिये।

(५११)

अपने वस्त्रों में जूँ और खटमल होने ही मत दो। यदि हो जावें तो उन्हें दो चार आदमियों के सामने ढूंढ़ ढूंढ़ कर मारना आरम्भ मत कर दो। बल्कि ऐसे काम करते समय शरमाओ क्योंकि वह मैलेपन का इजहार है। अतएव उन स्वेदज जीवों को एकान्त स्थान में ही निवारण करो और उन्हें पकड़ कर किसी दूसरे के वस्त्रों में भी मत छोड़ो।

(५१२)

रात दिन काम में आनेवाले पात्रों को माँज कर बिलकुल स्वच्छ रखो, उन्हें पीले या मैले मत रहने दो। कभी कभी किसी तरह की खटाई वगैरः से भी उन्हें साफ कर डालना चाहिये। माँज कर यदि पानी से धो डाले जावें तो बड़ी ही उत्तम बात हो। कई लोग बर्तनों को बाहर से बहुत ही साफ रखते हैं किन्तु भीतर

से उतने साफ नहीं होते। अतएव बर्तनों को बाहर भीतर से बिलकुल स्वच्छ रखो।

(५१३)

पीने का पदार्थ किसी को पिलाते वक्त उसे किसी छोटे पात्र में भर कर दो। जैसे गिलास कटोरी वगैरः में।

(५१४)

घर को झाड़ बुहार कर तथा लीपपोत कर साफ रखो। सभ्य पुरुषों के रहने का स्थान मैले होना उनकी सभ्यता को लांछन लगाता है। थोड़े से परिश्रम अथवा अल्प व्यय से मकान बिलकुल साफ रखा जा सकता है।

(५१५)

मकान में व्यर्थ की टूटी फूटी रद्दी चीजों को अकारण ही संचय मत करो। यदि कोई माँगता है तो दे दो। फेंकने की हो तो फेंक दो। काम में लाने की हो तो काम में लाओ, नहीं तो अग्निदेव के सिपुर्द कर दो।

(५१६)

हजामत बनाने के बाद स्नान अवश्य करो। यदि कारण विशेष से स्नान नहीं करो तो जहाँ जहाँ बाल गिरे हों या चिपके हों उन अंगों को पानी से धोकर साफ कर डालो। बिना किसी प्रकार की सफाई किये बाल बनवाने के बाद बाजार में या लोगों के पास मत जाओ।

(५१७)

घर में कलह मत होने दो और खुद भी अपने घर के लोगों पर जब कभी नाराज होओ तब इतने ज़ोर ज़ोर से चिल्ला

कर मत बोलो कि अड़ोसी पड़ोसी तक इकट्ठे हो जावें और दूसरे लोग तमाशा देखें तथा आपके घर की कई गुप्त बातें जान लें।

(५१८)

खाने पीने की चीजों के लिये लड़ाई झगड़ा, मारकूट या आपस में वादविवाद मत करो। यह बिलकुल ही संकीर्ण-हृदयता का सूचक है।

(५१९)

किसी वस्तु को देखकर उसे अकारण ही माँगने मत लग जाओ। क्योंकि शायद वह उसके न देने की हुई तो आपके माँगने के कारण उसे कष्ट होगा और यदि उसने नहीं दी तो आपके चित्त को दुःख होगा।

(५२०)

जबानी बातों का उत्तर जबान से ही दो और लिखित बातों का उत्तर लिख कर ही दो। लिखे हुए का जबान से और जबानी का लिख कर बिना किसी कारण विशेष के जबाब मत दो। खास कर वादविवाद के समय इस बात का बहुत ही ध्यान रखना चाहिये।

(५२१)

मुँह में कपड़े लेने और उन्हें चबाते रहने की आदत मत डालो।

(५२२)

यदि किसी ने आप से कोई गुप्त बात रखने के लिये कहा हो तो उसे गुप्त ही रखो और भूलकर भी किसी पर प्रकट न करो।

(५२३)

कसमों और प्रतिज्ञाओं को व्यर्थ ही न करो। कर लेने के बाद उन्हें भूलकर भी मत तोड़ो।

(५२४)

ऊँचे और ओछे वस्त्र कदापि मत पहिनो। अधिक लम्बे और ढीले भी मत पहिनो।

(५२५)

धोती को घुटने तक ऊँची, पीछे की ओर ध्वजा की तरह फहराती हुई तथा पीछे की तरफ इतनी मत ठूँसो जो पुटलिया सी बन जावे।

(५२६)

पजामे या पतलून के अन्दर धोती मत बाँधे रहो। यदि बाँधो तो ऐसी कस कर बाँधो जो किसी को मालूम भी न पड़े। बहुत से लोग जो इस बात का ध्यान नहीं रखते उनके पजामे या पतलून में धोती भरी होने के कारण ऐसी विचित्र शक्ल बन जाती है कि लोग देख देख कर हँसा करते हैं।

(५२७)

उत्सवों पर, त्योहारों पर ही बड़े बढ़िया वस्त्र पहिन लेना तथा और दिन पुराने मैले और कम कीमती वस्त्र पहिने रहना ठीक नहीं है।

(५२८)

कई लोग उत्सवादि के समय शेष वस्त्र तो नये और भड़कीले पहिन लेते हैं किन्तु धोती काली स्याह (मैली) ही पहिने रहते हैं यह उनकी तमाम सजावट को धूल में मिला देती है। इसलिये धोती को सदा स्वच्छ रखने का ध्यान रखना चाहिये।

(५२९)

कुँएँ में, गड्ढे में या रेल वगैरः की खिड़कियों में से बाहर की तरफ टाँगें लटका कर मत बैठो।

(५३०)

तिपाई, चारपाई, स्टूल, कुर्सी आदि ऊँचे आसनों पर बैठकर अपनी टांगें न झुलाओ।

(५३१)

बाज़ारों में जहाँ मनुष्य फिरते घूमते हों, वहाँ गले में हाथ डालकर या कन्धों पर हाथ रखकर घूमना फिरना या खड़े होना ठीक नहीं है।

(५३२)

जहाँ तक हो अकारण ही छाती, पैर और हाथों के बाल कैंची या अस्तुरे से नहीं कटाने चाहिये।

(५३३)

कलाई पर या गले में बहुत से लोग काले धागे बाँधते हैं, यह अनुचित है।

(५३४)

बहुत से लोग अकारण ही पैरों के अँगूठों में चाँदी, ताँबे वगैरः के छल्ले पहिनते हैं यह ठीक नहीं है।

(५३५)

दाँतों में छिद्र करा के उनमें सोने की कीलें जड़ाना या दाँतों पर सोने का पत्तर लगाना अच्छी बात नहीं है।

(५३६)

हाथों की अँगुलियों में छल्ले वगैरः पहिनना मेरे विचार से अनुचित है। जहाँ तक हो सके, मनुष्य को अपना चाँदी सोने के ज़ेवरों से बचाव करना चाहिये। क्योंकि—

"नराणाम् भूषणं रूपम् रूपाणां भूषणं गुणम्।
गुणानाम् भूषणं ज्ञानम् ज्ञानानाम् भूषणं क्षमा।"

(५३७)

वैदिक सभ्यता स्वर्णादि बहुमूल्य धातु के आभूषणों को पहिनने की आज्ञा देती है किन्तु वे असभ्यता के सूचक न हों।

(५३८)

यदि आप सरकारी कर्मचारी हैं तो अपने से छोटों को मत दबाओ—उन्हें दबाने में अपनी महानता मत समझो क्योंकि सभ्यता तुम्हें ऐसा करने से रोकती है।

(५३९)

अपने अधिकारों से अधिक बल प्रयोग करना अनुचित है। आप अपने को सरकारी नौकर मानते हैं सही, किन्तु यह भूल है। वास्तव में आप उस जनता के नौकर हैं जिस पर कि सरकार शासन करती है। राजा, प्रजा द्वारा स्थित है या यों कहिये कि प्रजा के कारण ही राजा है; इसलिये आप अपने को सबसे पहले प्रजा का और बाद में प्रजा के प्रतिनिधि राजा का नौकर समझो। इसलिये किसी भाई के साथ असभ्य बर्ताव करने का स्वप्न में भी ख्याल मत करो।

(५४०)

कई लोगों की आदत होती है कि न कुछ बात पर ही अपनी बात की सत्यता प्रकट करने के लिये कसमें खाते रहते हैं। यह उनकी एक आदत सी भी पड़ जाती है, इसलिये ऐसी आदत को छोड़ने की कोशिश करो। व्यर्थ ही कसमें खाना ठीक नहीं है। ऐसे व्यक्तियों पर लोग विश्वास नहीं लाते क्योंकि—

"बार बार सौगन्ध खा, करे दीन हो बात।
ऐसे नर से बचि रहौ, करिहै कबहूँ घात॥"

(५४१)

सौ काम अधूरे मत करो बल्कि एक काम पूर्ण करो।

(५४२)

गृहस्थ को चाहिये कि संध्या समय अपने घर आये हुए मनुष्य का भले प्रकार सत्कार करे; और सोने, बैठने तथा भोजन आदि का प्रबन्ध कर दे।

"अप्रणोद्योऽतिथिः सायं, सूर्योढोगृहमेधिना।
काले प्राप्तस्त्व कालेवा, नास्यानश्नन्गृहे वसेत्॥

(५४३)

यदि आपको किसी ने अपने पत्र और अखबार वगैरः डाकघर से या पोस्टमेन से केवल ले लेने का अधिकार दिया हो तो आप उसके पत्र न पढ़ो और न अखबारों को खोलो ही। अखबार के ऊपर का कागज चुपचाप हटाकर और उसे पढ़ लेने के बाद फिर उसपर ज्यों का त्यों कागज न चढ़ा दो। ऐसा करना बिलकुल अनुचित है।

(५४४)

औरतों को मार्ग में चलते समय और खास करके जहाँ मनुष्य चलते फिरते हों, खूब चिल्ला चिल्लाकर आपस में बातचीत नहीं करना चाहिये।

(५४५)

यदि आपने किसी की कहीं पर निन्दा सुनी हो तो उस निंदा-जनक बात को उसे एकान्त में कहो—लोगों के सामने कदापि भूलकर न कहो।

(५४६)

जिन्हें आप पूज्य दृष्टि से देखते हैं उन्हें किसी प्रकार का बोझा लेकर मत चलने दो। उनका बोझ उनके इन्कार करते रहने पर भी आप उठा लो। इसी प्रकार यदि आपके किसी मित्र के पास बोझ हो और आप खाली हाथों हो तो उसे बँटालो।

(५४७)

बहुत से मनुष्य अपने बैठने के कमरे में नग्न और फोश स्त्री पुरुषों के चित्र लगाते हैं, यह अनुचित है। मनुष्य को चाहिये कि सौन्दर्य्य की दृष्टि से औरतों के चित्र भी अपने कमरे में न लगावे। ऐसे चित्रों से निर्बलता उत्पन्न होती है।

(५४८)

देखने के लिये किसी के सिर पर से पगड़ी टोपी या साफा खुद अपने हाथों से न उतारो बल्कि उससे माँग लो।

(५४९)

बहुत से लोग किसी कम्पनी से कोई वस्तु वी० पी० पार्सल द्वारा मँगाते हैं और यदि वह उनके मन लायक नहीं हुई तो फिर किसी फर्ज़ी नाम से एक पोस्टकार्ड डालकर उसके यहाँ से कोई दूसरो वी० पी० मँगा लेते हैं। अन्त में उस नाम के मनुष्य का पता न लगने के कारण वी० पी० पार्सल दो चार दिन डाकखाने की हवा खाकर लौट जाती है। इससे उसको नुकसान हो जाता है। ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिये क्योंकि इससे कोई लाभ नहीं।

(५५०)

आजकल लिफाफे में ही पत्र लिखना सभ्यता समझा जाता है, किन्तु मेरे विचार से इस झूठी सभ्यता से सिवा हानि के कोई

लाभ नहीं है। यदि कार्ड से अधिक मजमून हो तो लिफाफे में पत्र लिखना चाहिये नहीं तो पोस्टकार्ड में ही लिखना बुद्धिमानी है।

(५५१)

बहुत से भाई अपने हाथ से ही दस्तखत करते समय अपने नाम के पीछे "जी" सम्मान सूचक शब्द लगा देते हैं। इसी तरह कई ब्राह्मण अपने हाथ से आपही आप अपने नाम के आगे "पंडित" शब्द लगा देते हैं। यह पांडित्य का चिन्ह नहीं है बल्कि अपांडित्य का नमूना है।

(५५२)

यदि किसी से नाम पूछना हो तो "आपका इस्म मुबारिक ?" "इस्म शरीफ ?" "श्रीमान् का शुभ नाम ?" आदि आलंकारिक वाक्यों में पूछना चाहिये।

(५५३)

किसी के नामोच्चारण के पूर्व श्रीयुत्, श्रीमान्, पंडित, सेठजी, महाशय, बाबू, मित्र, बन्धु आदि यथा योग्य शब्द लगाना चाहिये और नाम के अंत में "जी" शब्द का प्रयोग करना चाहिये।

(५५४)

किसी के लाड़ में रखे हुए घरू नामों को आप मत उच्चारण करो। क्योंकि प्यार का नाम उसी व्यक्ति के मुँह से बोला जाना चाहिये जिसने कि रखा हो।

(५५५)

वी० पी० मँगाकर लौटा देना अनुचित है। यदि लौटाना ही है तो मत मँगाओ। पहिले विचार लो, बाद में वी० पी० मँगाने का आर्डर दो। इस तरह से विश्वास जाता है। साथ ही आपका

तो खेल हो जाता है और दूकानदार का डाकखर्च पेकिंग मेहनत वगैरः बर्बाद हो जाता है ।

(५५६)

अशिव, अशुभ, और अभद्र विचारों को मन से निकाल डालिये । ये ही मनुष्य को असभ्य बनाते हैं ।

(५५७)

सदा सर्वदा मन में शुभ विचार, शुभ उच्चार और शुभ आचार को धारण करो । ये तीन बातें ही केवल ऐसी हैं जो मनुष्य को सभ्य बना देती हैं ।

(५५८)

वेद संसार के समस्त ग्रंथों में सर्वमान्य है । वैदिक सभ्यता इस पृथ्वी पर अपना सिक्का जमा चुकी है, इसलिये जिसे सभ्यता के उच्चतम शिखर पर पहुँचना है उसे चाहिये कि वह वेद का स्वाध्याय करे ।

(५५९)

सभ्यता और असभ्यता का विचारों से बड़ा भारी सम्बन्ध है । विचारों का पिता मन है अतएव मन को सदा अच्छे विचारों से युक्त रखना चाहिये ।

"मे मनः शिवसंकल्प मस्तु ।" य० ३४।६

(५६०)

हे परम पिता परमात्मा ! हम सब लोग मुँह से अच्छे शब्द बोलें, कानों से अच्छे शब्द सुनें, आँखों से अच्छे पदार्थ ही देखें, और शरीर से अच्छे कर्म करें । यही अंतिम प्रार्थना है ।

व्यक्ति में शान्ति ! राष्ट्र में शान्ति !! जगत् में शान्ति !!!

सस्ती-साहित्य-माला की पुस्तकें (प्रथम वर्ष)

दक्षिण अफ्रिका का सत्याग्रह—प्रथम भाग (ले०—महात्मा गांधी)

(१) पृष्ठ सं० २७२, मूल्य स्थायी ग्राहकों से ।≶) सर्वसाधारण से ।॥)

म० गांधीजी लिखते हैं—"बहुत समय से मैं सोच रहा था कि इस सत्याग्रह-संग्राम का इतिहास लिखूँ क्योंकि इसका कितना ही अंश मैं ही लिख सकता हूँ। कौनसी बात किस हेतु से की गई है, यह तो युद्ध का संचालक ही जान सकता है। सत्याग्रह के सिद्धांत का सच्चा ज्ञान लोगों में हो इसलिये यह पुस्तक लिखी गई है"। सरस्वती, कर्मवीर, प्रताप आदि पत्रों ने इस पुस्तक के दिव्य विचारों की प्रशंसा की है।

(२) **शिवाजी की योग्यता**—(ले० गोपाल दामोदर तामस्कर एम० ए०, एल० टी०) पृष्ठ-संख्या १६२, मूल्य स्थायी ग्राहकों से केवल ।) सर्वसाधारण से ।=) प्रत्येक इतिहास प्रेमी को इसे पढ़ना चाहिए।

(३) **दिव्य जीवन**—अर्थात् उत्तम विचारों का जीवन पर प्रभाव। संसार प्रसिद्ध स्विट् मार्सडन के The Miracles of Right Thoughts का हिंदी अनुवाद। पृष्ठ-संख्या १३६, मूल्य स्थायी ग्राहकों से ।) सर्व साधारण से ।=) चौथी बार छपी है।

(४) **भारत के स्त्री-रत्न**—(पाँच भाग) इस ग्रंथ में वैदिक काल से लगाकर आजतक की प्रायः सब धर्मों की आदर्श, पातिव्रत्य-परायण, विद्वान और भक्त कोई ५०० स्त्रियों का जीवन-वृत्तान्त होगा। हिंदी में इतना बड़ा ग्रन्थ आज तक नहीं निकला। प्रथम भाग पृष्ठ ४०२ मूल्य स्थायी ग्राहकों से केवल ॥।) सर्वसाधारण से १=) आगे के भाग शीघ्र छपेंगे।

(५) **व्यावहारिक सभ्यता**—यह पुस्तक बालक, युवा, पुरुष, स्त्री सबही को उपयोगी है, परस्पर बड़ों व छोटों के प्रति तथा संसार में किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए, ऐसे ही अनेक उपयोगी उपदेश भरे हुए हैं। पृष्ठ १०८, मूल्य स्थायी ग्राहकों से ≡) सर्वसाधारण से ।)॥

(६) **आत्मोपदेश**—(यूनान के प्रसिद्ध तत्वज्ञानी महात्मा एपिक्टेटस के विचार) पृष्ठ ११६, मूल्य स्थायी ग्राहकों से ≡)॥ सर्वसाधारण से ।–)

पता—सस्ता-साहित्य-मंडल, अजमेर (पीछे देखिये)

सस्ती प्रकीर्णक माला की पुस्तकें (प्रथम वर्ष)

(१) **कर्मयोग**—(ले० अध्यात्म योगी श्री अश्विनीकुमार दत्त। इसमें निष्काम कर्म किस प्रकार किये जाते हैं—सच्चा कर्मवीर किसे कहते हैं—आदि बातें बड़ी खूबी से बताई गई हैं। पृष्ठ सं० १५२, मूल्य केवल ।=) स्थायी ग्राहकों से ।)

(२) **सीताजी की अग्नि परीक्षा**—सीता जी की 'अग्नि परीक्षा' इतिहास से और विज्ञान से तथा अनेक विदेशी उदाहरणों द्वारा सिद्ध की गई है। पृष्ठ सं० १२४ मूल्य ।-), स्थायी ग्राहकों से ≡)॥

(३) **कन्या शिक्षा**—सास, ससुर आदि कुटुंबी के साथ किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिये, घर की व्यवस्था कैसी करनी चाहिये आदि बातें, कथा रूप में बतलाई गई हैं। पृष्ठ सं० ९४ मूल्य केवल ।), स्थायी ग्राहकों से ≡)

(४) **यथार्थ आदर्श जीवन**—हमारा प्राचीन जीवन कैसा उच्च था, पर अब पाश्चात्य आडम्बरमय जीवन की नक़ल कर हमारी अवस्था कैसी शोचनीय हो गई है। अब हम फिर किस प्रकार उच्च बन सकते हैं—आदि बातें इस पुस्तक में बताई गई हैं। पृष्ठ सं० २६४, मूल्य केवल ॥-) स्थायी ग्राहकों से ।=)॥

(५) **स्वाधीनता के सिद्धान्त**—प्रसिद्ध आयरिश वीर टैरेंस मेक्स वीनी की Principles of Freedom का अनुवाद—प्रत्येक स्वतंत्रता-प्रेमी को इसे पढ़ना चाहिये। पृष्ठ सं० २०८ मूल्य ॥), स्थायी ग्राहकों से ।-)॥

(६) **तरंगित हृदय**—(ले० पं० देवशर्मा विद्यालंकार) भू० ले० पद्मसिंहजी शर्मा—इसमें अनेक ग्रन्थों को मनन करके एकांत हृदय के सामाजिक आध्यात्मिक और राजनैतिक विषयों पर बड़े ही सुन्दर, हृदयस्पर्शी मौलिक विचार लिखे गये हैं। किसी का अनुवाद नहीं है। पृष्ठ सं० १७६ मूल्य ।≡) स्थायी ग्राहकों से ।-)

☞ अभी इस माला में प्रथम वर्ष में १००० पृष्ठों की ये छः पुस्तकें निकली हैं। अभी ६०० पृष्ठों की पुस्तकें और निकलेंगी।

☞ हमारे यहाँ हिंदी की सब प्रकार की उत्तम पुस्तकें भी मिलती हैं—बड़ा सूचीपत्र मँगाकर देखिये।

पता—सस्ता-साहित्य-प्रकाशक मंडल, अजमेर।